श्रीहरिः ॥

कान्यकुब्जप्रकाशिका

कवीन्द्रश्रीमुरारिदेवकृता

इटावावास्तव्येन ब्राह्मणसर्वस्वमासिक
पत्रसम्पादकेनश्रीपण्डित
भीमसेनशर्मणा
भाषार्थेनोपनिबद्धा ।

Printed by B. D. S. at the Brahm Press Etawah.

प्रथमवार १००० } सं० १९६९ सन् १९१२ { मूल्य ≡)

अथ-कान्यकुब्ज प्रकाशिका

प्रस्तावः।

पाठक वर्ग ! यह पुस्तक हमारे मित्र पण्डित दुर्गादत्त शास्त्री विद्यारत्नोपाधि भूषित वृन्दावन धाम निवासी से हम को प्राप्त हुआ है, विक्रमीय संवत् १०१० का बना हुआ है जिसको बने ९५८ वर्ष बीत गये अब तक यह पुस्तक किसी छापेखाने में मुद्रित नहीं हुआ था। हमारे मित्र पं० दुर्गादत्त जी की सम्मति हुई कि इसका भाषा टीका करके तुम अपने छापेखाने में छपाओ। तथा अन्य भी जिन २ महाशयों ने देखा उन सब की यही अनुमति हुई कि पुस्तक अच्छा श्रुति स्मृति पुराणों के अनुकूल निष्पक्ष और सम्पूर्ण ब्राह्मण जाति का उपकारी है। यह बात पाठक वर्ग समस्त पुस्तकका अवलोकन करने पर स्वयमेव जान लेंगे। सब ब्राह्मण जाति का उपकारी होने पर भी इसका नाम "कान्यकुब्ज प्रकाशिका" इस लिये रक्खा गया है कि इस में प्रश्न द्वारा कान्यकुब्जोंके विषय में आरम्भ और उसी विषय पर इस की समाप्ति है॥

स्मरण रखना चाहिये कि इस में किसी भी नाम वाले ब्राह्मण वर्ग की निन्दा नहीं है किन्तु सभी नाम वाले ब्राह्मणों का गौरव गोत्र, प्रवर, वेद, शाखा, सूत्र, शिखा, पाद और आस्पदादि का विवेचन इत्यादि के वर्णन द्वारा इस में दिखाया है परन्तु कान्यकुब्जों की कुछ महिमा विशेष है। ब्राह्मणों के आस्पदों का विशेष विचार इसमें दिखाया है, इस पुस्तक के निर्माता आगरा प्रान्त में बसति ग्राम के निवासी मुरलीधरोपनामक कवीन्द्र पं० मुरारि देव हैं। इन महाशय के बनाये अन्य भी कोई काव्यादि ग्रन्थ हैं। हमने भी इस पुस्तक के लेख को सब ब्राह्मण जाति का उपकारी निष्पक्ष देख समझ कर भाषा टीका करके छपाने का विचार

किया । पाठक ब्राह्मण वर्ग ! हमने यथामति लोकोपकार बुद्धि से इस पुस्तक को शुद्ध किया और भाषा टीका किया है तथापि पाठकों को कहीं मूल वा टीका में कोई त्रुटि वा भूल जान पड़े तो उन महाशयों से हमारा निवेदन है कि उसे ठीक निश्चय करके शुद्ध करलें और दोषग्राही न बनकर गुणग्राही बनने की कृपा हम पर करें। हम सब ब्राह्मण जातिमात्रस्थ ब्राह्मण व्यक्तियों को हाथ जोड़ के प्रणाम नमस्कार करते हुए इस कान्यकुब्ज प्रकाशिका पुस्तकका सब ब्राह्मणों के उपकारार्थ प्रत्येक श्लोकका नागरी भाषा में अर्थ लिखना प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकाशिका पुस्तक में छः प्रभा नामक प्रकरण वा अध्याय और २४५ दो सौ पैंतालीश श्लोक हैं। आशा की जाती है कि हमारे मान्य ऋषि महर्षियों के शुद्धवंशीय सन्तान ब्राह्मण महाशय इस पुस्तक को सादर ग्रहण करके हमें कृतार्थ करेंगे ॥

ओं तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु—

निवेदक—भीमसेन शर्म्मा इटावा ।



श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ कान्यकुब्जप्रकाशिकारंभः ॥

प्रणम्यजगदीशानं जगदीशात्मजेनवै ।
मुरारिणाऽद्यक्रियते कान्यकुब्जप्रकाशिका ॥१॥

भावार्थ—मैं पं० जगदीश का पुत्र मुरारि देव शिवात्मक जगदीश को प्रणाम करके आज कान्यकुब्ज प्रकाशिका पुस्तक बनाता हूं ॥१॥

अथग्रन्थस्यनिर्माणे कारणन्तावदुच्यते ।
वटेश्वरेऽल्पबोधानां विवादात्मकमेवयत् ॥२॥

अब पहिले इस ग्रन्थ के बनाने का कारण कहते हैं कि वटेश्वर क्षेत्र में मूर्ख ब्राह्मणों का आपस में विवाद होना ही इस के बनने का कारण हुआ ॥२॥

श्रीवटेश्वरसत्क्षेत्रे वितते ब्रह्मवादिभिः ।
वाजपेयेमहायज्ञे मुनिभिर्ब्राह्मणोत्तमैः ॥३॥

एक समय वटेश्वर नामक उत्तम क्षेत्रमें वेदवेत्ता मुनि तथा उत्तम २ विद्वान् ब्राह्मणों ने वाजपेय नामक महायज्ञ किया ॥३॥

तत्रदेशान्तरेभ्यश्च ब्राह्मणाःकर्मकोविदाः ।
तपोयुक्ताश्चवेदानां यथार्थज्ञानसंयुताः ॥४॥
आहूताःशिष्यसहिता बहुमानपुरस्सरम् ।
पूजितादक्षिणाभिश्च यथाकर्मोद्भवंबुधैः ॥५॥

उस में देशान्तरों से कर्मकाण्ड के तत्त्व को जानने वाले तपस्वी वेदों के यथार्थज्ञान से युक्त शिष्यों के सहित अनेक विद्वान् ब्राह्मण बहुत मान प्रतिष्ठा के साथ बुलाये गये और यथा योग्य दक्षिणादि के द्वारा उनका पूजन किया गया ॥४।५॥

केचित्तत्रागताधूर्ता दम्भाऽहंकारसंयुता: ।
मूर्खानिरक्षराचार्या: परस्परविरोधिन: ॥६॥

उसी यज्ञ में कुछ दम्भी अहंकारी, परस्पर विरोध फैलाने वाले निरक्षरभट्ट मूर्ख और धूर्त ब्राह्मण भी आये थे ॥६॥

सर्वेद्विजा:कान्यकुब्जा माथुरान्मागधान्विना।
इतिवाक्यप्रमाणेन सर्वेऽस्मत्प्रभवाद्विज: ॥७॥

उन में से कोई बोले कि मथुरा निवासी चौबों को और मगधदेश के निवासियों को छोड़के अन्य सभी ब्राह्मण कान्यकुब्ज हैं इस वाक्य के प्रमाण से सभी ब्राह्मण हम कान्यकुब्जों में से प्रकट हुए हैं ॥७॥

तानूचु:केचनोन्मत्ता: क्रोधयुक्तास्तथाविधा: ।
काणश्चकुब्जकश्चैव भ्रातरौद्वौबभूवतु: ॥८॥
महोदयपुरस्थौ ता–वनाहूतौगतौमखे ।
रामचन्द्रस्यनिन्दन्तौ जगदीशंविचेरतु: ॥९॥
निहत्यरावणंविप्रं ब्रह्महत्याप्रशान्तये ।
करोतियज्ञंरघुरा–डग्राह्यं दानमस्यतु ॥ १० ॥

उन को उन्हीं जैसे क्रोधी उन्मत्त मूर्ख वा धूर्त किन्हीं अन्य ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि—एक काण [काना] द्वितीय कुब्ज [कुबड़ा] महोदय पुर नामी गांवके रहने वाले दो ब्राह्मण भाई हुए थे वे दोनों मूर्ख बिना बुलाये भगवान् रामचन्द्रजी के यज्ञ में गये और भगवान् की निन्दा करते हुए विचरने लगे कि—रावण ब्राह्मण को मारके ब्रह्महत्या महापाप की शान्ति के लिये रघुराज रामचन्द्र यज्ञ करते हैं इससे इनका दान किसी को नहीं लेना चाहिये ॥ ८ । ९ । १० ॥

श्रुत्वाचशान्तितौतेन भूभुजादानमुत्तमम् ।
ताभ्यांदत्तंकाणकुब्जं कुलमेतत्तयोस्स्मृतम् ११

वैसी निन्दा का वृत्तान्त भगवान् रामचन्द्रजी ने सुनकर उन दोनों काण और कुब्ज ब्राह्मणों को बुलाया और नम्रता से समझा कर (रावण आततायी महा अधर्मी गो ब्राह्मण हिंसक राक्षस था ऐसे को धर्मानुकूल संग्राम में मारना धर्म शास्त्र के अनुकूल क्षत्रिय राजा का कर्त्तव्य है अनुचित नहीं) दोनों को उत्तम २ दान दिया, उन्हीं काण और कुब्ज दोनों भाइयों से चला वंश कान्यकुब्ज कहाया ॥११॥

पुनश्चकालयोगेन कान्यकुब्जेतिकीर्तितम् ।
इत्येवंकलहंचक्रुर्मूर्खाज्ञानविवर्जिताः ॥ १२

पीछे काल पाकर काण कुब्ज के स्थान में कान्यकुब्ज ऐसा नाम होगया इस प्रकार अज्ञानी मूर्ख ब्राह्मण आपस में कलह करने लगे [अभिप्राय यह है कि सभी ब्राह्मण कान्यकुब्जों से पैदा हुए तथा काने और कुबड़े दो मूर्ख ब्राह्मणों का वंश कान्यकुब्ज कहाया ये दोनों ही बातें मूर्खों की मानी हुई शास्त्र विरुद्ध कल्पित थीं इसी से बटेश्वर के बाजपेय यज्ञ में आये हुए विद्वान् ब्राह्मणों ने दोनों बातों को मूर्खों का तमाशा माना था] ॥१२॥

येचब्राह्मतपोयुक्ताः पञ्चगौडाबुधोत्तमाः ।
यज्ञेस्थितास्तेजहसु-र्मूर्खसाहसदर्शनात् ॥१३॥

और जो पंच गौड़ ब्राह्मणों में तपस्वी वेदशास्त्रज्ञ विद्वान् लोग वहां विद्यमान थे वे सब मूर्खों का शास्त्रार्थ देखकर हंस पड़े ॥१३ ॥

पुनस्तान्बोधयामासु- स्तत्त्वज्ञाबहुयुक्तिभिः ।
आख्योविप्रेषुसंजाता देशजाअवराइति ॥१४॥

फिर शास्त्रका मर्म जानने वाले विद्वानों ने उन मूर्खों को बहुतसी युक्तियों से समझाया कि ब्राह्मणों में कान्य

कुब्जादि नाम भिन्न२ देशोंमें निवास करने के कारण पीछे से चले हैं इन नामों के होने से छोटाई बड़ाई किसी की नहीं है ॥१४॥

कान्यकुब्जःशुभोदेश–स्तत्रवासान्महात्मसु ।
वैदिकाख्यगुतेष्वेव देशाख्यातेपुबुध्यताम् १५

कान्यकुब्ज पुण्य देश का नाम है उस देश में निवास करने से वेद संबन्धी प्रतिष्ठा वाले—दीक्षित, आवस्थी [अवस्थी] वाजपेयी, शुक्ल, द्विवेद, इत्यादि उपाधि वाले श्रेष्ठब्राह्मणों का नाम कान्यकुब्ज हुआ ॥१५॥

गोत्रप्रवरशाखादि–मार्गएकस्सनातनः ।
सएवदृश्यतेसर्व–देशस्थेषुद्विजन्मसु ॥ १६ ॥

परन्तु गोत्र, प्रवर, शाखा, इत्यादि मार्ग सनातन से हैं वही सब देशस्थ ब्राह्मणों में अब तक भी एक सा दीखता है॥१६॥

अतएवद्विजास्सर्व–एकएवनसंशयः ।
यूयंमुधाभ्रमंत्यक्त्वा.धर्मंभजतशाश्वतम् ॥१७॥

इसी से सब ब्राह्मण ऋषि वंश होने से एकही हैं । तुम लोग व्यर्थ के भ्रम को छोड़ के सनातन से चले हुए धर्म का सेवन करो ॥ १७ ॥

इतिश्रुत्वागतास्तूष्णीं शठास्तेलज्जयान्विताः।
यज्ञपूर्त्तौबुधास्तेपि सर्वेस्वस्वगृहंययुः ॥१८॥

ऐसा सुनकर वे व्यर्थ झगड़ने वाले मूर्ख ब्राह्मण लज्जित होकर चुप चाप चले गये । और यज्ञ के पूरे होने पर वे सब विद्वान् लोग भी अपने २ घर को गये ॥ १८ ॥

अथचाऽस्मत्पितुःपार्श्व–मागतोद्विजसत्तमः ।
वटेश्वराच्चन्द्रनाथः पप्रच्छातिथ्यपूजितः ॥१९॥

भेदोऽयंब्राह्मणेवर्णे कान्यकुब्जादिकःप्रभो ॥
सृष्टयारम्भेह्यभूत्किंवा पश्चाज्जातइतीर्य्यताम्॥२०

इसके पश्चात् हमारे पिता जी के समीप बटेश्वर से चन्द्रनाथ नामक उत्तम ब्राह्मण आया और अतिथि सत्कार से पूजित होने पर पिता से पूछा कि हे प्रभो! ब्राह्मण वर्णों में यह कान्यकुब्जादि भेद क्या सृष्टि के आरम्भ से हुआ है वा पीछे से सो कृपा करके कहिये ॥ १९ । २० ॥

व्यवस्थाकीदृशीशास्त्रे कनिष्ठज्येष्ठकल्पने ।
अथवाऽत्रप्रमाणंहि प्रब्रूह्यन्धपरम्परा ॥ २१ ॥

ब्राह्मणों के बड़े छोटे वा श्रेष्ठ निकृष्ट होने की व्यवस्था शास्त्र में कैसी है? अथवा इस विषय में अन्धपरम्परा ही प्रमाण है ॥ २१ ॥

इतिश्रुत्वामहोप्राज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः ।
पितामेकथयामास शास्त्रवाक्यैस्समासतः ॥ २२॥

ऐसा सुनकर सर्व शास्त्रवेत्ता महाविद्वान् हमारे पिताजी ने शास्त्र के वाक्यों द्वारा संक्षेप से कान्यकुब्जादि ब्राह्मणों के भेद विषय में व्यवस्था कही ॥ २२ ॥

श्रुत्वाप्रसन्नहृदय–श्चन्द्रनाथोमहोमतिः ।
संक्षेपाद्ग्रन्थकरणे प्रार्थनांचक्रआनतः ॥२३॥

बड़े बुद्धिमान चन्द्रनाथ जी उसको सुनकर प्रसन्न हुए और नम्र भाव से इस विषय का संक्षिप्त ग्रन्थ बनाने की प्रार्थना पिता जी से की ॥ २३ ॥

एतस्मिन्नन्तरेराजा श्रीमदर्गलवंशजः ।
कृष्णसिंहस्समायातो मत्पितुःशिष्यउत्तमः ॥२४॥

इसी बीच में अर्गल वंशी राजा कृष्णसिंह जो मेरे पिता

का उत्तम शिष्य था आया ॥ २४ ॥

प्रणम्यगुरुपादौच मत्पादावपिसत्तमः ।
आज्ञप्तोगुरुणाचास्था–त्तत्समीपेकृताञ्जलिः ॥२५॥

राजा गुरु के और मेरे चरणों में प्रणाम करके गुरू की आज्ञा होने पर उनके समीप हाथ बांध कर बैठा ॥ २५ ॥

तदापुनर्नृपस्याग्रे प्रियोमंत्री द्विजोत्तमः ।
चन्द्रनाथोऽब्रवीत्स्वामिन्ग्रन्थसिद्ध्यैकिमुत्तरम् २६

तब फिर राजा के सामने पूर्वोक्त राजमन्त्री चन्द्रनाथ ब्राह्मण ने कहा कि हे स्वामिन् ! ग्रन्थ बनाने के लिये जो मैंने निवेदन किया था उसका क्या उत्तर आप देते हैं ॥ २६ ॥

श्रुत्वाप्रहस्यजनको नत्वाराज्ञाऽपियाचितः ।
ग्रन्थन्निर्म्मातुमाज्ञां मे दत्तवाञ्ज्येष्ठसूनवे ॥२७॥

साथही राजा की भी प्रार्थना सुनकर पिताजी ने मुझ ज्येष्ठ पुत्र को इस विषय का ग्रन्थ बनाने की आज्ञा दी ॥ २७ ॥

राजापिमन्त्रिसहितः श्रुत्वाज्ञांस्वगुरोर्मुखात् ।
मामर्थयत्प्रसन्नात्मा बहुमानपुरस्सरम् ॥ २८ ॥

मन्त्रि सहित राजा ने भी गुरुमुख से आज्ञा सुनकर प्रसन्न हो बहुत प्रतिष्ठा के साथ मुझ से निवेदन किया ॥ २८ ॥

अथचार्गलदुर्गस्य प्रान्तेसौरीतटेशुभे ।
भगवद्देवरचिते वसतिग्रामआत्मनः ॥ २९ ॥
संवत्सरेविक्रमस्य खंचन्द्राऽभ्रधरामिते ।
राधाजयन्त्यांमध्यान्हे प्रारम्भोऽस्यमयाकृतः ३०

इसके अनन्तर आगरा किला के प्रान्त में शुभ यमुना तट पर भगवद्देव के बनाये अपने वसतिग्राम में विक्रमीय संवत् १०१० राधा जयन्ती तिथि के दिन मध्यान्ह के समय इस ग्रन्थ के बनाने का प्रारम्भ मैंने किया ॥ २९ । ३० ॥

चन्द्रनाथमहाप्राज्ञ शृणुप्रश्नाऽनुसारतः।
पुराणवचनैर्वृद्ध-वाक्यैरपिवदाम्यहम् ॥३१॥

हे चन्द्रनाथ द्विजोत्तम ! तुम अपने प्रश्न के अनुसार सुनो मैं पुराणों के वचनों और वृद्ध लोगों के कहे प्रमाण वाक्योंके अवलम्ब से कहता हूं ॥ ३१ ॥

कान्यकुब्जादिभेदेतु शास्त्रमस्तिनियामकम्।
कदापिनीशङ्कनीया त्वयाचाऽन्धपरम्परा ॥३२॥

ब्राह्मणों के कान्यकुब्जादि भेद होने में शास्त्र ही नियामक है अन्ध परम्परा से कान्यकुब्जादि भेद होने की शङ्का तुम को कदापि नहीं करनी चाहिये ॥ ३२ ॥

शास्त्रीयवचनैःपुष्टैर्वर्णयाम्यनुपूर्वशः।
प्रश्नास्तेसरलोक्त्याऽहं कान्यकुब्जशिरोमणे॥३३॥

हे कान्यकुब्जों में शिरोमणि ! चन्द्रनाथ ! शास्त्रों के पुष्ट प्रमाणों से सरलतापूर्वक तुम्हारे प्रश्नों के उत्तरों का क्रम से वर्णन करते हैं ॥ ३३ ॥

इति श्री महामहोपाध्याय श्रीमुरलीधरोपनामक श्री जगदीशदेवात्मजकवीन्द्रमुरारिदेवकृतायां कान्यकुब्जप्रकाशिकायामुपोद्घातवर्णनात्मिका प्रथमप्रभा ॥ १ ॥ *

यह कान्यकुब्ज प्रकाशिका की उपोद्घात रूप प्रथम प्रभा पूरी हुई ॥

—○○○—

सृष्ट्यादौभगवान्विष्णुः परमात्मासनातनः।
उत्तस्थौशयनात्तूर्णं स्वयंसंक्रीडनेच्छया ॥ १ ॥

सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा सनातन विष्णु भगवान् स्वयं क्रीड़ा करने की इच्छा से स्वयमेव शीघ्रता पूर्वक शेषशय्या से उठे ॥ १ ॥

तस्यनाभेरभूत्पद्मं लोकसंस्थानलक्षणम् ।
तद्द्योतयामासहरि-र्योगमायामुपाश्रितः ॥२॥

उन नारायण की नाभि से भूमण्डल का पूर्णरूप संसार की संस्थिति का चिन्ह कमलाकार हुआ (इसी को मनु आदि महर्षियों ने अण्डाकार लिखा है) उस अण्डाकार वा कमलाकार को योगमाया का आश्रय वाले हरिभगवान् परमात्मा ने अपने तेजसे दीप्तियुक्त किया (इसी से मनु जी ने सूर्य के तुल्य तेजोयुक्त उक्त अण्डे को लिखा है) ॥ २ ॥

तस्मिन्जज्ञेस्वयन्देव स्स्वयंभूश्चतुराननः ।
तत्रैवाधिष्ठितस्तूर्णन्तपोऽतप्यतदारुणम् ॥ ३॥

उस कमलाकार अण्ड में से चार मुखों वाले स्वयंभू ब्रह्मा जी स्वयमेव प्रकट हुये, उसी जगह ठहरे हुए ब्रह्मा जी ने शीघ्र ही घोर तप किया ॥ ३ ॥

ततोब्राह्मेणतपसा संयुक्तस्यप्रजापतेः ।
आदौतपोमयासृष्टि-रासीत्सत्वगुणाश्रया ॥४॥

तदनन्तर ब्रह्मत्व संबन्धी तपसे संयुक्त प्रजापति ब्रह्मा से पहिले २ तपोमयी सत्वगुण युक्त सृष्टि हुई ॥ ४ ॥

मुखबाहूरुपादेभ्यो वर्णाश्चत्वारउद्गताः ।
एतेषांवृत्तयःशुद्धा आश्रमाश्चयथाक्रमम् ॥ ५ ॥

ब्रह्मा जी के मुख, बाहु, जंघा और पगों से क्रमशः चारों वर्ण हुए इन ब्राह्मणादि वर्णों की शुद्ध शास्त्रानुकूल जीविका और ब्रह्मचर्यादि आश्रम क्रम से नियत हुए ॥५॥

एकाब्राह्मणजातिश्च तदासीद्विधिनाकृता ।
ब्राह्मेनतपसायुक्ता यन्महत्त्वंरविर्यथा ॥ ६ ॥

पहिले सर्गारम्भ में विधाता ने एक ही ब्राह्मण जाति की थी उस में पञ्च गौड़ादि कोई भेद नहीं था वह ब्राह्मण

जाति ब्रह्मत्व के तप से युक्त सूर्य के तुल्य तेजस्विनी थी ॥६॥

तल्लक्षणन्तुकथितं पुराणेषुमहर्षिभिः ।
कोशेषुशृणुतन्नाम चन्द्रनाथमहामते ॥ ७ ॥

सो हे महामति चन्द्रनाथ! पुराणों और कोशोंमें महर्षियों ने कहा उस तपोयुक्त ब्राह्मण जाति का लक्षण तुम सुनो ॥७॥

ब्राह्मन्तपोब्रह्मधनं सनञ्चपरमन्तपः ।
ब्रह्मतेजोमहामूलं सत्तत्त्वंनैगमाकरम् ॥ ८ ॥
स्वस्ववेदोक्तमार्गेण साक्षात्कारात्मकंहरेः ।
ब्राह्मणैस्सेव्यमेवैतद्-ब्राह्मंतपइतीरितम् ॥ ९ ॥

ब्रह्मत्व का रक्षक ब्राह्म तप, ब्रह्म धन, सन, परमतप, ब्रह्मतेज, इत्यादि नामों वाला तप ब्राह्मणपन का मूल है और इस तप की खान वेद हैं, अपने २ वेद वा शाखा में कहे प्रकारानुसार हरि भगवान् का आराधन ही उस तपका स्वरूप है। ब्राह्मणों को इसी ब्राह्म तप का अवश्य सेवन करना शास्त्रों में कहा है ॥ ८ । ९ ॥

स्वाध्यायताशौचताच साम्यादिव्रतधारणा ।
विज्ञानानन्दसन्तुष्टि-रेवमाद्यङ्गसंयुतम् ॥१०॥

नियम से वेदाध्ययन रूप स्वाध्याय, सम्यक् शुद्धि, समतादि रखने का व्रत धारण करना, विज्ञान, आनन्द और संतोष इत्यादि उसी तप के अंग हैं ॥१०॥

शमोदमस्तपश्शौचं सत्यंज्ञानंदयाश्रुतम् ।
विद्यास्तिक्यंहिविप्राणां परमन्तपउच्यते ॥११॥

शम, दम, तपः शौच, सत्य भाषण, ज्ञान, दया, वेदादि शास्त्राध्ययन, विद्या, और आस्तिकता इन का सम्यक् परिशीलन करना ब्राह्मणों का परम तप है ॥११॥

वेदमेवसदाऽभ्यस्ये–त्तपस्तप्स्यन्द्विजोत्तमः।
वेदाभ्यासोहिविप्राणां परमन्तपउच्यते ॥१२॥

ब्राह्मण को चाहिये कि तप का अनुष्ठान करता हुआ वेद का सदा ही अभ्यास करे। क्योंकि वेदाभ्यास ही ब्राह्मणों का परमतप है ॥१२॥

इत्युक्तलक्षणतपः संश्रयोधर्मएवहि।
मुख्योब्राह्मणजातेर्हि मनुरित्येवमब्रवीत् ॥१३॥

इस प्रकार के लक्षण वाले तप के साथ ही ब्राह्मण जाति का मुख्य धर्म है यही बात मनु जी ने कही है ॥१३॥

एवंजातिविभागाख्ये ग्रन्थेऽपिप्रतिपादितम्।
पुराब्राह्मणजातिस्तु सनयुक्ताह्यभूत्परम् ॥१४॥

जाति विभाग नामक ग्रन्थ में भी ऐसा ही प्रतिपादन किया है। पूर्वकाल में ब्राह्मण जाति सन नामक तप से परमयुक्त होने के कारण सनाढ्य कहाती रही अर्थात् तपो युक्त होने से ब्राह्मण जाति का द्वितीय नाम ही सनाढ्य हो गया था ॥ १४ ॥

ततस्तुगोत्रप्रवर–शाखासूत्रादिसंयुता।
मुनिभिःकल्पितासम्यग् व्यवहारप्रवृत्तये ॥१५॥

तदनन्तर ऋषि मुनियों ने गोत्र, प्रवर, शाखा, सूत्रादि के साथ ब्राह्मण जाति की उपाधियां सम्यक् व्यवहार सिद्धि के लिये चलाईं ॥१५॥

यआदिपुरुषोवंशे पुरासीत्कीर्त्तिभाजनम्।
कुलप्रवर्त्तकाचार्य्य–स्तन्नाम्नागोत्रमुच्यते ॥१६॥

जिस वंशमें जो आदि पुरुष परम कीर्त्ति वाला प्रतापी सिद्ध तपस्वी ऋषि महर्षि कुल प्रवर्त्तक आचार्य हुआ उसके नामसे गोत्र कहाता है ॥१६॥

तस्यमुख्यःसुतश्शुद्ध–श्शिष्यावाधर्मतत्पराः ।
एकद्वित्रिचतुस्संज्ञा- स्तन्नामप्रवरंस्मृतम् ॥ १७ ॥

उस गोत्र ऋषि के मुख्य पुत्र वा धर्म परायण उसके जो शिष्य हुए वे ही एक दो तीन वा चार आदि संख्या वाले उस २ गोत्र के प्रवर कहे गये ॥१७॥

कुलप्रवर्त्तकाचार्यो यंचवेदमधीतवान् ।
सएवकुलवेदोहि तत्कुलेसंप्रकीर्तितः ॥ १८ ॥

और कुल प्रवर्त्तक गोत्र ऋषिने जिस वेद को पढ़ा वही उस कुल का वेद कहाने लगा ॥१८॥

तत्रवैप्रवराचार्यै -र्याशाखानिगमस्यच ।
निजस्यैवमुदाऽधीता साशाखातत्कुलेस्मृता ।१९।

और उस २ कुल के प्रवराचार्यों ने वेद की जिस शाखा का पठन पाठन अपनी रूचिसे चलाया उस कुल के ब्राह्मणों की वही शाखा कही गयी ॥१९॥

सूत्रंतुद्विविधंप्रोक्तं श्रौतस्मार्तव्यवस्थयो ।
तयोश्चलक्षणंशास्त्रे प्रोक्तंविज्ञैःपृथक्पृथक् ॥२०॥

वेद के अङ्ग कल्प सूत्र दो प्रकार के हैं एक श्रौत द्वितीय स्मार्त्त, उन द्विविध कल्पसूत्रों के लक्षण शास्त्र में विद्वानों ने पृथक् २ कहे हैं ॥२०॥

केवलंश्रुतिवाक्यानां पद्धतिःश्रौतलक्षणम् ।
स्मृतितात्पर्यसहितं तदेवस्मार्तमुच्यते ॥ २१ ॥

केवल श्रुति वाक्यों की पद्धति क्रम से कहना श्रौत सूत्रों का लक्षण है और स्मृतियों का तात्पर्य साथ में मिला कर गृह्यकर्मों की पद्धति का वर्णन करने वाले स्मार्त्त वा गृह्य सूत्र कहाते हैं ॥२१॥

तानिसूत्राणिगोत्राणां संप्रोक्तानिपृथक्पृथक् ।
एकंश्रौतंपरंस्मार्तं प्रतिगोत्रमितिस्थितिः ॥२२॥

सब गोत्रों के वे सूत्र पृथक् २ माने गये हैं एक श्रौत द्वितीय स्मार्त वा गृह्य प्रत्येक गोत्र के दो सूत्र हैं [जैसे शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिनीय शाखाध्यायियों का कातीय श्रौत सूत्र और पारस्कर गृह्यसूत्र है] ॥२२॥

ऋग्यजुस्सामाथर्वाणां यज्ञद्वारउदाहृताः ।
पूर्वाद्याःक्रमशोविज्ञै-र्यथावेदोद्भवंस्फुटम् ॥२३॥

ऋग्वेद का पूर्वद्वार, यजुर्वेद का दक्षिण द्वार, सामवेद का पश्चिम द्वार और अथर्ववेद का उत्तर द्वार ऐसे चार वेदों के चार यज्ञ द्वार विद्वान् ऋषियोंने नियत किये हैं ॥२३॥

योयस्यवेदस्याध्येता तद्द्वाराप्रविशेन्मखे ।
तस्यामेवदिशिस्थित्वा स्वकार्यंसाधयेद्बुधः ॥२४॥

जो ऋत्विज् ब्राह्मण जिस वेद का अध्येता हो वह यज्ञ में उसी दिग्द्वारसे प्रवेश करे और उसी दिशा में स्थित रहता हुआ अपना काम करे यह प्राचीन चाल है ॥२४॥

त्रयोग्नयोहिमुख्याश्च गार्हपत्यादयश्शुभाः ।
प्रतिगोत्रेऽधिकारस्तु तेषांज्ञेयःपृथक्पृथक् ॥२५॥

गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि ये तीन श्रौत अग्नि मुख्य हैं । प्रत्येक गोत्र वाले ब्राह्मणों को उन तीनों अग्नियों को पृथक् स्थापन करने का अधिकार है ॥२५॥

वामदक्षिणभेदेन शिखाबन्धनमिष्यते ।
पादप्रक्षालनंतद्व-त्प्रतिवेदविबुद्धये ॥ २६ ॥

मध्य शिरके वाम दक्षिण भाग में दो शिखा में पहिले गांठ देवे वा दक्षिण शिखा में अथवा द्वितीय यह भी हो

सकता है कि एक ही शिखा के वाम दक्षिण दो भाग मान कर ग्रन्थि देने का भेद ब्राह्मणों में पहिले से चला हो परन्तु कई शिखा रखने की चाल प्राचीन है पंच शिखाचार्य के पांच शिखा थीं। और मधुपर्क के समय वाम वा दक्षिण पाद के प्रक्षालन का भेद भी भिन्न २ वेद वाले ब्राह्मणों में पहिले से ही भिन्न २ है ॥ २६ ॥

कुलदेवस्स्वयंब्रह्मा प्रतिगोत्रन्निगद्यते ।
उमाकान्तरमाकान्त–मूर्त्तिभेदेन सिद्धये ॥२७॥

ब्राह्मण जाति के कुल देव ब्रह्मा जी मुख्य इस लिये हैं कि ब्रह्माजी ने प्रारम्भमें तपोमयी सृष्टि बनायी वही तपो युक्त ब्राह्मण जाति हुई तथा [ब्राह्मणोऽपत्यं ब्राह्मणः] इस प्रकार ब्रह्मा पदसे ही ब्राह्मण पद सिद्ध होता है। वैष्णव शैव सब जातियां हो सकती हैं परन्तु ब्रह्मा जी से सनकादि वा मरीच्यादि ब्राह्मण ही हुए उन्हीं मरीच्यादि के सन्तान ब्राह्मण कहाते हैं। यद्यपि शिव जी और विष्णु भगवान् भी मूर्त्ति भेद से ब्राह्मण कुल के देवता होते हैं तथापि ब्राह्मणों का स्वत्व ब्रह्मा जी के साथ संबद्ध होने से और ब्रह्मा जी की सरस्वती देवी ब्रह्मविद्या के साथ ब्राह्मणों का विशेष सम्बन्ध होनेसे ब्रह्मा जी का अन्तरङ्ग कुल देव होना ब्राह्मणों से निवृत्त नहीं हो सकता ॥२७॥

प्रवराणितुदेयानि ब्रह्मसूत्रेयथाकुलम् ।
ओंकारब्रह्मस्मृतये धारणेऽस्यप्रयोजनम् ॥२८॥

जिस कुल के ब्राह्मणों के जितने प्रवर हों उतने यज्ञोपवीत में देने चाहिये। ओंकार सहित वेद का स्मरण दिलाने के लिये यज्ञोपवीत धारण का प्रयोजन है अर्थात् वेदाध्ययन करना ब्राह्मण जाति का मुख्य काम है उसी का

स्मारक चिन्ह यज्ञोपवीत है ॥२८॥

पृष्ठवंशंसमारभ्य धृतंयद्विन्दतेकटिम् ।
एतावदुपवीतंस्यान्नातिनीचंनचोच्छ्रितम् ॥२९॥

बाम कन्धे पर से पृष्ठ वंश पर होता हुआ कटि भाग तक पहुंचने वाला यज्ञोपवीत धारण करे अधिक लम्बा वा और छोटा न हो ॥२९॥

अङ्गुल्यग्रेतुविप्राणां मध्यपर्वणिभूभुजाम् ।
मूलपर्वणिवैश्यानां ब्रह्मसूत्रमितिःस्मृतम् ॥३०॥

यज्ञोपवीत बनाने के लिये अंगुलियों के अग्रभाग में ब्राह्मण सूत के लपेटों को गिने बीच के पर्वों में क्षत्रिय गिने और तीसरे मूल पर्व में वैश्य गिने यही ब्रह्म सूत्र का प्रमाण है ॥३०॥

षट्कक्षीब्राह्मणोभूया-च्चतुःकक्षीतुबाहुजः ।
द्विकक्षीवणिजोज्ञेय एककक्षीतुपादजः ॥३१॥

ब्राह्मण छः कांछ वाला हो, छः स्थानों में धोती के अंशों को खोंस लेना छः कांछ कहाती है। एक लंगोट की, दोनों पार्श्व में धोती के दो प्रान्त, एक २ आगे पीछे और एक आगे संकुचित किये भाग को द्वितीय बार खोंसना इस प्रकार दो पीछे दो आगे और दो दोनों पार्श्वों में छः हो गयीं। क्षत्रिय चार कांछों वाला, वैश्य दो कांछों वाला और शूद्र एक कांछ वाला हो ॥३१॥

आकेशान्तंब्राह्मणस्य ललाटान्तंमहीभुजः ।
कर्णान्तंचैववैश्यस्य दण्डप्रमितिरुच्यते ॥३२॥

शिखा की उंचाई तक लम्बा ब्राह्मण ब्रह्मचारी का पालाश दण्ड, ललाट पर्यन्त, क्षत्रिय का वट वा खदिर जन्य दण्ड, और कर्ण पर्यन्त वैश्यका उदुम्बर जन्य दण्ड होना चाहिये ॥३२॥

इत्यादिव्यवहारस्तु जातिबोधायकल्पितः ।
गुणकर्मानुरूपेण बुधैःशास्त्रानुसारतः ॥३३॥

इत्यादि व्यवहार की कल्पना विद्वान् ऋषियों ने जाति भेद जताने के लिये जातीय गुण कर्म देखकर शास्त्रानुसार की है ॥३३॥

एषस्सनातनःपन्था धर्मशास्त्रेविलोक्यताम् ।
गोत्रावलीप्रभृतिषु गोत्रादीनांविवेचनम् ॥३४॥

ब्राह्मणादि वर्णों का यह पूर्वोक्त व्यवहार सनातन मार्ग धर्मशास्त्रों में देखना चाहिये और गोत्रावली आदि पुस्तकों में गोत्र प्रवरादि का विवेचन देखना चाहिये ॥३४॥

ग्रन्थभूयस्त्वभयतो मयानात्रप्रकीर्तितः ।
विस्तरःकेवलंज्ञप्त्यै दिङ्मात्रंचप्रदर्शितम् ॥३५॥

ग्रन्थ बढ़ जाने के भय से हमने यहां नहीं कहा केवल जता देने के लिये नमूना मात्र दिखा दिया है ॥ ३५॥

इति श्रीमहामहोपाध्याय मुरलीधरोपनामक श्रीजगदीश-
देवात्मजकवीन्द्रश्रीमुरारिदेवकृतायां कान्यकुब्जप्रका-
शिकायां ब्राह्मणजातिवेदादिव्यवस्थानियमात्मिका
द्वितीयप्रभा समाप्ता ॥ २ ॥ ×

—०—

यह कवीन्द्र मुरारि देव कृत कान्यकुब्ज प्रकाशिका में वेदादि शास्त्र की व्यवस्था ही ब्राह्मण जाति की नियामिका है इस अंश की द्वितीय प्रभा समाप्त हुई ॥

उक्तलक्षणसम्पन्ना ब्राह्मणीजातिरुत्तमा ।
सर्ववर्णोत्तमाह्यासीद् भुक्तिमुक्तिप्रसाधिका ॥१॥

उक्त लक्षणों से युक्त उत्तम ब्राह्मण जाति भोग और मोक्ष को सिद्ध करने वाली सब वर्णोंमें पहिलेसे उत्तम है ॥१॥

वैदिकाख्याभिरुद्घुष्टा बभूवचयथार्थतः ।
आख्याप्राप्तौपरंयत्नं चकाराऽव्ययसिद्धये ॥२॥

यह जाति पहिले वेद सम्बन्धिनी यथार्थ उपाधियों से पुकारी जाती थी । ब्राह्मण लोग वैदिक उपाधियां राज प्रबन्ध से होने वाली विद्वत्सभा से मिलने के लिये बड़ा प्रयत्न किया करते थे क्योंकि इस आस्पद उपाधि के अनुसार ही लोक में अटल मान प्रतिष्ठा हुआ करती थी ॥२॥

तत्रतुप्रथमैकासीद् ब्राह्मेणतपसान्विता ।
तस्याऽवान्तरभेदैश्च नानाख्यासंयुतापुनः ॥३॥

पहिले सर्गारम्भ के पश्चात् ब्राह्म तप से युक्त ब्राह्मण जाति एक ही थी, तब तुम कौन ब्राह्मण हो? ऐसा पूछने की आवश्यकता नहीं होती थी । उस ब्राह्मण जाति में नाना प्रकार के अवान्तर भेद पीछे से हुए ॥३॥

तेभेदाःकेचनोच्यन्ते मयाशास्त्रसमीक्षया ।
वेदाध्ययनयज्ञादि सेवयोद्भवमागताः ॥४॥

उन में से कुछ अवान्तर भेद शास्त्र को देखकर हम यहां कहते हैं कि जो भेद वेदाध्ययन और यज्ञादिका अनुष्ठान करने से प्रकट हुए हैं ॥४॥

साङ्गोपाङ्गन्तपोब्राह्मं सनशब्देनलक्षितम् ॥६॥
तस्यसंसेवनाच्छुद्धस्सनाढ्यइतिकथ्यते ॥५॥

ब्रह्मत्वका उत्तेजक साङ्गोपाङ्ग तप का नाम सन है उस तप का सम्यक् सेवन करने से शुद्ध हुए ब्राह्मण सनाढ्य कहाते हैं ॥ ५ ॥

सनऊढइतिप्रोक्तया ससनोढउदाहृतः ।
सनत्कुमारस्यमुनेस्संहितायाम्प्रकीर्तितम् ॥६॥

और तप करने में जो ऊढ़ नाम प्राप्त हुए वे सनोढ कहाये यह बात महर्षि सनत्कुमारकी बनाई सनत्कुमार संहिता में कही है ॥ ६ ॥

श्रोत्रियःश्रुतितात्पर्य–ज्ञानेनैवसुलक्षितः ।
श्रोत्रियःश्रुतितात्पर्य–ज्ञइतिस्मृतिवाक्यतः ॥७॥

इसी प्रकार श्रुतियों का तात्पर्य जानने के कारण ब्राह्मणों का नाम श्रोत्रिय हुआ, श्रुतितात्पर्यज्ञ को श्रोत्रिय कहते हैं ऐसा स्मृति में लिखा है ॥ ७ ॥

यजुषांसेवनाद्विप्रो याजुषःपरिकीर्तितः ।
द्विजंयाजुषमभ्यर्च्चेदितिसूत्रनिदर्शनम् ॥८॥

यजुर्वेदका विशेष अभ्यास करने से याजुष नाम हुआ, कल्प सूत्र में लिखा है कि याजुष ब्राह्मणका अच्छे प्रकार पूजन करे ॥ ८ ॥

केवलंशुक्लयजुषां पठनाच्छुक्लइत्यपि ।
पठनात्तैत्तिरीयाणां तैत्तिरीयइतिस्मृताः ॥९॥

केवल शुक्ल यजुर्वेदके पढ़ने से ब्राह्मणोंका शुक्ल ऐसा नाम पड़ा, तैत्तिरीय शाखा के पढ़नेवाले ब्राह्मण तैत्तिरीय कहाये ॥ ९ ॥

ऋग्वेदाऽध्ययनादेव बह्वृचश्चाश्वलायनः ।
ऋग्वेदीतिप्रभृतय आसन्सूत्रेषु लोक्यताम् ॥१०॥

ऋग्वेदके पढ़ने से बह्वृच और आश्वलायन कहाये, ऋग्वेदी इत्यादि कल्पसूत्रों में लिखा देखो ॥ १० ॥

सामवेदस्य पठना–च्छन्दोगः सामगायनः ।
सामगस्सामवेदीचे–त्यादयः परिकीर्तिताः ॥११॥

सामवेदके पढ़नेसे छन्दोग, सामगायन, सामग और सामवेदी इत्यादि नाम कहे जाते हैं ॥ ११ ॥

अथर्ववेदाध्ययना–त्प्रोक्तआङ्गिरसोद्विजः ।
आथर्वणीयोऽथर्वज्ञोऽ–थर्ववेदीतिसंज्ञया ॥ १२ ॥

और विशेष कर सकल्प अथर्ववेद के पढ़ने से ब्राह्मणकी उपाधि आङ्गिरस, आथर्वणीय, अथर्वज्ञ, अथर्ववेदी इत्यादि होती हैं ॥ १२ ॥

वेदद्वयस्यचाध्येता–द्विवेदइति गद्यते ।
वेदत्रयज्ञःकथित–स्त्रिवेदो वा त्रिपाठिकः ॥१३॥

दो वेदोंको कल्प सहित पढ़ने वाला ब्राह्मण द्विवेद वा द्विवेदी कहाता और कल्प सहित तीन वेदका जानने वाला त्रिवेद त्रिवेदी वा त्रिपाठी कहाता है ॥ १३ ॥

त्रिवारं पठनाद्वापि त्रिवारीति निगद्यते ।
काण्डत्रयज्ञःकाण्डी च त्रिगुणायतइत्यपि ॥१४॥

और कल्प सहित वेद को तीन बार पढ़ने से त्रिवारी कहागया जिसका तिवारी अपभ्रंश हुआ है। वेदके कर्म उपासना ज्ञान तीनों काण्डों को जानने वाले ब्राह्मण काण्डी वा त्रिगुणायत कहाने लगे ॥ १४ ॥

चतुर्णांश्चैववेदानां ज्ञाताज्ञेयश्चतुर्द्धरः ।
चतुर्वेदश्चतुर्वेत्ते–त्यादयः परिकीर्त्तिताः ॥ १५ ॥

चारों वेदोंको जानने वाले ब्राह्मण चतुर्द्धर, चतुर्वेद, चतुर्वेदी, चतुर्वेत्ता वा (चौवे) इत्यादि उपाधियों वाले कहेगये॥१५॥

पाठकोवैदिकोवेद–वेत्तानैगमिकस्तथा ।
वेदज्ञोवेदवान्वेद–पात्रोवेदनिधिःपरः ॥ १६ ॥
वेदार्थविद्वेदबुध इत्येवं वहवःस्मृताः ।
पुराणेषु प्रलभ्यन्ते प्रसिद्धाअपि भूतले ॥ १७ ॥

सामान्य तथा वेद भागोंके पढ़ने जानने वाले ब्राह्मणों की

पाठक, वैदिक, वेदवेत्ता, नैगमिक, वेदज्ञ, वेदवान्, वेदपात्र, वेदनिधि, वेदार्थवित्, वेदबुध, वेदतत्त्वज्ञ, इत्यादि बहुत उपाधियां पुराणों में मिलतीं और भूमण्डल के आर्यावर्त्त में भी प्रसिद्ध हैं ॥ १६ । १७ ॥

एकदेशन्तुवेदस्य वेदाङ्गान्यपि वा पुनः
योऽध्यापयति वृत्त्यर्थ–मुपाध्यायस्सउच्यते ॥१८॥

जो वेद का कोई एक अंश वा वेदके अङ्गों को जीविका लेकर पढ़ाता है वह उपाध्याय कहाता ॥ १८ ॥

क्षीयतेपतिहीनास्त्री ह्यऽनुपाध्यायकोनृपः ।
भारतादिषुचेत्यस्य प्रतिष्ठामहतीक्ष्यते ॥ १९ ॥

जैसे पति से हीन स्त्री क्षीण हो जाती है वैसे जिस के पास उपाध्याय ब्राह्मण नहीं रहता वह राजा भी क्षीण हो जाता है इस प्रकार के प्रमाण से महाभारत में उपाध्यायकी महती प्रतिष्ठा देखी जाती है ॥ १९ ॥

नित्याग्निसेवनाद्विप्र आहिताग्निः प्रकथ्यते ।
अग्निहोत्र्याग्निकश्चैव होताहोतृकएवच ॥ २० ॥

विधि पूर्वक अग्निको स्थापित करके जो नित्याग्निहोत्र करता वह आहिताग्नि तथा अग्निहोत्री, आग्निक, होता, होतृक भी कहाता है ॥ २० ॥

पञ्चाग्न्यादितपस्तपस्यं–स्तपस्वीतापसस्तथा ।
तपश्चरंस्तपःशाली तपोवानिति भण्यते ॥ २१ ॥
नित्यंनैमित्तिकंकर्म ह्यनुसेवन्यथाविधिः ।
कर्मठीकार्मिकश्चैव कर्मीधार्मिक उच्यते ॥२२॥

पञ्चाग्नि आदिका तप करता हुआ. तपस्वी नाम तापस कहाता, सामान्यतया तप करता हुआ तपः शाली तथा तपो-

वान् कहाता है ॥ २१ ॥ नित्य नैमित्तिक कर्म का यथाविधि सेवन करता हुआ कर्मठी, कार्मिक, और धार्मिक कहाता है ॥२२॥

नानायज्ञान्समारम्भन् दीक्षितःकथितोद्विजः ।
वाजपेयमनुष्ठाय वाजपेयीति कथ्यते ॥ २३ ॥

अनेक प्रकारके यज्ञों का आरम्भ करके दीक्षा लेता हुआ ब्राह्मण दीक्षित कहाता, और वाजपेय यज्ञका अनुष्ठान कर लेने पर वाजपेयी कहाता है ॥ २३ ॥

सोमयज्ञसमारम्भात् सोमयाजी च सोमपाः ।
सोमसूस्सोमकर्त्ताच सौमिकश्चापि कीर्त्यते ॥२४॥

सोमयाग का आरम्भ करके सोमयाजी व सोमपा, सोमसूः, सोमकर्त्ता, और सौमिक कहाता है ॥ २४ ॥

यजतेयाजुषैर्मन्त्रै–स्सर्वयज्ञेषु सिद्धिदैः ।
यज्ञाङ्गभूतोयोविप्र–स्सचाध्वर्युःप्रकीर्तितः ॥२५॥

सब यज्ञोंमें सिद्धि देने वाले यजुर्वेद के मन्त्र ब्राह्मण से जो यज्ञ करता है वह यज्ञाङ्ग स्वरूप ब्राह्मण अध्वर्यु कहाता ॥२५॥

ब्रह्मोद्गाताहोताध्वर्यु–श्चत्वारोयज्ञवाहकाः ।
इतिस्मृतिप्रमाणेन चाख्यैषा प्रवरास्मृता ॥२६॥

ब्रह्मा अथर्व से, उद्गाता सामसे, होता ऋग्वेदसे और अध्वर्यु यजुर्वेद से यज्ञ करने वाला कहाता है ये ब्रह्मादि चारों यज्ञ को मिलकर पूरा करते हैं । स्मृति के प्रमाण से ब्रह्मादि उपाधि श्रेष्ठ मानी गई है ॥ २६ ॥

सामाध्वर्युर्ऋगध्वर्यु–रथर्वाध्वर्युरेवच ।
शुक्लाध्वर्युस्तथाकृष्णा- ध्वर्युरध्वर्युभेदतः ॥२७॥

सामाध्वर्यु उसे कहते हैं जो सामवेद और यजुर्वेद दोनों के विधानसे यज्ञको जानता हो, जो ऋग् यजु दोनोंके विधान

से यज्ञ करासके वह ऋगध्वर्यु, जो अथर्व तथा यजुर्वेद इन दोनों के विधान से यज्ञ को करसके वह अथर्वाध्वर्यु कहाता और शुक्ल यजुसे यज्ञविधि करे वह शुक्लाध्वर्यु और जो कृष्णयजु से करे वह कृष्णाध्वर्यु कहाता है ये यजु के दो भेद होने से दो प्रकार के अध्वर्यु हैं ॥ २७ ॥

याज्ञिकाऽवसथी याज्ञ–स्स्नातकःक्रतुकोमखी ।
मखयाजीश्रौतिकश्च स्मार्त्तपाण्डेयमिश्रकाः ॥२८॥
माध्यन्दिनीयःकातीयः कठकःशाकलीयकः ।
मौद्गलीयःकौथुमीयो गोभिलीयोहिरण्यकः ॥२९॥
इत्यादिवहवोभेदा–श्शाखासूत्रसमाश्रयात् ।
जाताजिज्ञासुभिरिति चरणव्यूहईक्ष्यताम् ॥३०॥

शाखा और कल्प सूत्रों के भिन्न विधानों से यज्ञ करने वाले ब्राह्मणोंके याज्ञिक, आवसथी, याज्ञ, स्नातक, क्रतुक, मखी, मखयाजी, श्रौतिक, स्मार्त्त, मिश्रक, माध्यन्दिनीय, कातीय, कठक, शाकलीयक, मौद्गलीय, कौथुमीय, गोभिलीय, हिरण्यक वा हिरण्यकेशीय, इत्यादि बहुत उपाधि हुई हैं जिनका व्याख्यान जिज्ञासु लोगों को चरण व्यूह ग्रन्थ में देखना चाहिये ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

अन्योपाख्यातयस्तेषां विद्यावहुगुणाश्रयात् ।
समुद्भूताद्विजाग्र्येषु विख्यातास्सन्तिभूतले ॥३१॥

विद्या और अनेक गुणों के कारण ब्राह्मणों की अन्यभी अनेक उपाख्यातियां हुई हैं जो भूमण्डल के भिन्न २ प्रान्तों में प्रचलित हैं सब उपाधियों को सब नहीं जानते ॥ ३१ ॥

तद्भेदाश्चप्रकथ्यन्ते संक्षेपादेवकेचन ।
विद्यारत्नस्तत्वनिधि–र्वैदान्तीतार्किकस्तथा ॥३२॥
तर्कपञ्चाननस्तर्की तर्कालङ्कारएवच ।

शाब्दिकश्शब्दवेत्ता च वैयाकरणकेशरी ॥ ३३ ॥
कविराशुकविःकाव्य–कर्त्ताकाव्यकलानिधिः ।
कवीन्द्रःकाव्यसिन्धुश्च कविराट्काव्यसागरः ॥३४॥
शास्त्रीभट्टोभट्टभट्टो विद्यासागरउद्भटः ।
चक्रवर्तीसार्वभौमो विद्यावागीश एववा ॥३५॥
महामहाद्युपाध्याय--श्चण्डोपाध्याय ईश्वरः ।
घटिकाशतकोवाग्मी विद्यानिधिरपिस्मृतः ॥३६॥
इत्येवंवैदिकाआख्या--स्सभेदाःकथितामया ।
संक्षेपादेवशास्त्रोक्त्या कान्यकुब्जशिरोमणे ॥३७॥

इति श्री महामहोपाध्याय मुरलीधरोपनामक श्री-
जगदीशदेवात्मज- कवीन्द्रश्रीमुरारिदेवकृता-
याङ्कान्यकुब्जप्रकाशिकायां ब्राह्मण
जातौ मङ्गलवैदिकाख्यासूचना-
त्मिका तृतीय प्रभा ॥३॥* ॥

उन उपाधियों के संक्षेप से कुछ थोड़े भेदोंको हम कहते हैं—विद्यारत्न, तत्त्वनिधि, वेदान्ती, तार्किक, तर्कपञ्चानन, तर्कालङ्कार, शाब्दिक, शब्दवेत्ता, वैयाकरण केशरी, कवि, आशुकवि, काव्यकर्त्ता, काव्यकलानिधि, कवीन्द्र, काव्यसिन्धु, कविराज, काव्यसागर, शास्त्री, भट्ट, भट्टभट्ट, विद्यासागर, उद्भट, चक्रवर्त्ती, सार्वभौम, विद्यावागीश, महामहोपाध्याय, चण्डोपाध्याय, ईश्वर, घटिकाशतक, वाग्मी, विद्यानिधि, हे कान्यकुब्ज शिरोमणि चन्द्रनाथ ! शास्त्रप्रमाणानुसार पूर्वोक्त उपाधियां भेदों सहित संक्षेप से हमने कही है इनका विस्तार अन्यभी बहुत साहित्याचार्यादि हो सकता है ॥ ३२ । ३३ । ३४ । ३५ । ३६ । ३७ ॥

यह मुरारिदेव कृत कान्यकुब्जप्रकाशिका में वैदिक उपाधियों की सूचनारूप तीसरी प्रभा समाप्त हुई ॥

अथ वैदेशजख्याति–संयुक्तासीत्ततः परम् ।
यथाचब्राह्मणज्ञाति–स्तथासाऽद्यप्रकाश्यते ॥१॥

इसके अनन्तर ब्राह्मण जाति के साथ देशके वाचक शब्दों से बनी उपाधियों का सम्बन्ध हुआ अर्थात् अति प्राचीनकाल में तपोधनादि ब्राह्मणों की उपाधियां हुईं तदनन्तर द्वितीय काल में श्रोत्रिय अग्निहोत्री आहिताग्नि आदि वेद और यज्ञों के प्रचार से ब्राह्मणों के उपनाम हुए और उस से पीछे देशोंके नामसे ब्राह्मणोंके पञ्चगौड़ तथा कान्यकुब्जादि नाम पड़े उन देशोपाधियोंको हम प्रकारया प्रकाश करते हैं ॥१॥

स्वायम्भुवोमनुश्चासी–त्तत्पुत्रश्चप्रियव्रतः ।
ताभ्यांकृतादेशसीमा व्यवहारप्रवृत्तये ॥ २ ॥

सृष्टि के आरम्भ में पहिले स्वायम्भुव मनुजी हुए और उनके पुत्र प्रियव्रत हुए उन दोनों ने व्यवहार चलने के लिये देशोंकी सीमा नियतकी ॥ २ ॥

देशकालानुरोधेन प्रेक्ष्यतत्त्वबलाऽबलम् ।
ब्रह्मविद्यादिलाभाय मुख्यंदेशप्रयोजनम् ॥ ३ ॥

देशकाल के अनुरोध से भूमिके शुद्धांशों का बलाबल देखकर ब्रह्मविद्यादि लाभ करने के लिये देश विभाग का प्रयोजन माना गया ॥ ३ ॥

तत्तद्देशगतेष्वेव ब्राह्मणेषुसनातमसु ।
याआख्यादेशजाःख्याताः सन्तिताःरूढिमागताः॥४॥

उस २ देश में जाकर निवास करने से उस नामक तपसे से युक्त ब्राह्मणों में जो २ देश के नाम चले वे पीछे से रूढि होगये ॥ ४ ॥

आख्याहिदेशसंयोगा–दितिजैमिनिनास्फुटम् ।
मीमांसाशास्त्रउक्तंव पुराणेष्वपि दृश्यते ॥ ५ ॥

देशके संयोगसे नाम पड़ते हैं यह बात मीमांसा शास्त्र में जैमिनि आचार्यने स्पष्ट कही और पुराणोंमें भी दीखती है॥५॥

सारस्वताः कान्यकुब्जा गौडामैथिलकोत्कलाः ।
पञ्चगौडाइतिख्याता विन्ध्योत्तरनिवासिनः ॥६॥

सारस्वत, कान्यकुब्ज, गौड़, मैथिल और उत्कल ये पांच विन्ध्याचलसे उत्तर देशमें निवास करने वाले पञ्चगौड़ कहाये ॥६॥

कर्णाटकामहाराष्ट्रा—स्तैलङ्गाद्राविडास्तथा ।
गुर्जराश्चैवपञ्चैते द्राविडाविन्ध्यदक्षिणे ॥ ७ ॥

कर्णाटक, महाराष्ट्र, तैलङ्ग, द्रविड़, और गुर्जर ये पांच विन्ध्याचल से दक्षिण प्रान्तोंके निवास करने वाले पञ्चद्राविड़ कहाये ॥ ७ ॥

ग्रन्थेजातिविभागाख्ये विशेषश्चाऽत्रसूचितः ।
चन्द्रनाथमहाबुद्धे त्वयासोपिविबुद्ध्यताम् ॥८॥

हे महामति ! चन्द्रनाथ ! जाति विभाग नामक ग्रन्थ में इस विषय का विशेष विचार किया है सो भी तुम सुनो ॥८॥

सृष्ट्यारम्भे ब्राह्मणानां जातिरेकाप्रकीर्त्तिता ।
ब्राह्मेणतपसायुक्ता देशभेदाद्द्विधाह्यभूत् ॥९॥
गौडद्राविडभेदाभ्या—न्ताभ्यांभेदादशस्मृताः ।
चतुरशीतिभेदाश्च दिग्भेदेभ्योऽभवन्पुनः ॥१०॥

सृष्टिके आरम्भ में ब्रह्मतपके तपसे युक्त ब्राह्मणोंकी एक ही जाति थी वह देश भेद से पहिले दो प्रकार की हुई एक गौड़ द्वितीय द्रविड़, उन दोके पांच २ करके पीछे दश भेद हुए, उसके पश्चात् दिशाओं के भेद से ब्राह्मणों के ८४ चौरासी भेद हुए ॥ ९ । १० ॥

तेभ्योऽवान्तरभेदाश्च बहवोदेशवासतः ।
ग्रामवासादप्यभूवं--स्तेख्यातास्सन्तिभूतले ॥११॥

देशवास के कारण उन चौरासी से आगे और भी बहुत अवान्तर भेद हुए, तथा भिन्न २ ग्राम नगरों के नाम से भी ब्राह्मणोंके अनेक नाम हुए जो भूमण्डल में विख्यात हैं ॥११॥

मयातुकोन्यकुब्जाख्या त्वन्मुदेप्रोच्यतेऽधुना ।
कान्यकुब्जस्यदेशस्य प्रमाणंतावदाकल ॥ १२ ॥

उन सबका विचार छोड़के हे चन्द्रनाथ ? तुम्हारी प्रसन्नता के लिये हम कान्यकुब्ज नाम पर संमति विचार दिखाते हैं सो तुम पहिले कान्यकुब्ज देशका प्रमाण सुनो ॥१२॥

शृङ्गिणस्स्थलमारभ्य दाल्भ्यौकोन्तलायत: ।
कोशलाद्दक्षिणेदेश: कान्यकुब्जस्सनाकर: ॥१३॥

शृङ्गिस्थल नाम शृङ्गी रामपुर से दाल्भ्य ऋषि के आश्रम पर्यन्त [यह आश्रम कहीं पूर्व में होने का अनुमान है] लम्बा, कोशल देश नाम अयोध्यापुरी से दक्षिण में ब्राह्मणात्मक तप की खान कान्यकुब्ज देश कहाता है [यद्यपि कानपुर, फतेपुर फर्रुखाबाद इटावादि अन्य जिलों में भी कान्यकुब्ज ब्राह्मणों का निवास दीखता है तथापि लखनऊ बाराबंकी उन्नाव रायबरेली हरदोई शाहजहांपुर आदि नगरों में अब भी अधिक निवास है संभव है कि समीप २ के नगर कानपुरादि में पीछे से फैल गये हों वा क्रमश: गंगाजी उत्तर को अधिक हट गयीं हों] ॥१३॥

अत्रापिप्रोच्यतेकिञ्चि-त्तात्पर्य्यंतन्निशामय ।
अस्मद्विपूर्वकालीनं यत्पुराणेषु पठ्यते ॥ १४ ॥

इस अंश पर भी कुछ और अभिप्राय कहते हैं सो हे चन्द्रनाथ ! तुम सुनो जो वृत्तान्त हम लोगोंके होने से पहिले ही पुराणों में पढ़ा गया है ॥ १४ ॥

आर्य्यावर्त्तैकभागस्य जान्हव्युत्तरवर्तिन: ।
पञ्चालसंज्ञासीत्पूर्वं कान्यकुब्जेत्यत:परम् ॥१५॥

आर्यावर्त्त देश का एक भाग जो गंगा जी से उत्तर में है उसकी पहिले पञ्चाल संज्ञा थी पीछे उसी पञ्चाल देश का नाम कान्यकुब्ज देश हुआ ॥ १५ ॥

पञ्चालसंज्ञाहेतुश्च तत्रतावन्निगद्यते ।
श्रीभागवतमाश्रित्य चान्द्रीयनृपयोगतः ॥ १६ ॥

पञ्चाल देश की संज्ञा होनेका हेतु भी हम कहते हैं श्री मद्भागवत में कहे चन्द्रवंशी राजाओं के योग से इस देश का पञ्चाल नाम हुआ है ॥ १६ ॥

आसीच्चन्द्रान्वयेराजा पूरुःपरमधार्मिकः ।
जनमेजयआसीत्त-स्यप्रचिन्वांस्ततस्सुतस्ततः ॥१७॥
प्रवीरोथनमस्युर्वै तस्माच्चारुपदोऽभवत् ।
तस्यसुद्युरभूत्पुत्र-स्तस्माद्बहुगमस्ततः ॥ १८ ॥
संयातिस्तस्याऽहंयाती रौद्राश्वस्तत्सुतःस्मृतः ।
ऋतेयुस्तस्यपुत्रोऽभू-द्वीरःपरमधार्मिकः ॥ १९ ॥
ऋतेयोरन्तिभारोऽभू-त्तत्सुतस्सुमतिस्स्मृतः ।
पुत्रोऽभूत्सुमतेरैभ्यो दुष्यन्तस्तत्सुतोमतः ॥२०॥
दुष्यन्तोमृगयांयातः कण्वाश्रमपदंगतः ।
तत्रासीनां स्वप्रभया मण्डयन्तींरमामिव ॥२१॥
विलोक्यसद्योमुमुहे देवमायामिवस्त्रियम् ।
पप्रच्छकामसन्तप्तः प्रहसन्श्लक्ष्णयागिरा ॥२२॥
कात्वंकमलपत्राक्षि कस्यासिहृदयङ्गमे ।
किंस्विच्चिकीर्षितंत्वत्र भवत्यानिर्जनेवने ॥२३॥
व्यक्तंराजन्यतनयां वेद्म्यहंत्वांसुमध्यमे ।
नहिचेतःपौरवाणा-मधर्मेरमतेक्वचित् ॥ २४ ॥

चन्द्रवंशी राजाओं में परमधार्मिक राजा पूरु हुआ उस

का पुत्र जनमेजय, जनमेजय का प्रचिन्वान्, उनका प्रवीर, प्रवीरका नमस्यु, नमस्युका चारुपद, उसका सुद्यु, सुद्युका बहुगव उससे संयाति संयतिका अहंयाति उसका रौद्राश्व, रौद्राश्वका ऋतेयु परम धर्मात्मावीर पुत्र हुआ ऋतेयुसे रन्तिभार उससे सुमति, सुमति से रैभ्य हुआ। रैभ्यका पुत्र राजा दुष्यन्त हुआ वह दुष्यन्त वनमें शिकार खेलने को गया हुआ कण्व महर्षि के आश्रम पर पहुंचा वहां लक्ष्मीके तुल्य शोभित बैठी हुई रूप यौवन वती देवमाया के तुल्य कन्या को देखकर राजा शीघ्र मोहित हो गया। कामसे संतप्त होकर राजाने हंसते हुए कन्या से कोमल वाणी द्वारा पूछा कि हे कमलनयनी ! तुम कौन हो किन की हो इस निर्जन वनमें तुम क्या करना चाहती हो ? हे सुश्रोणि ! मैं जानता हूं कि तुम किसी राजाकी कन्या हो पौरव वंशके राजाओंका चित्त कभी अधर्म पर नहीं जाता और मेरा चित्त तुम पर गया तो अनुमान है कि तुम राजकन्या हो ॥१७॥–२४ ॥

शकुन्तलोवाच ।

विश्वामित्रात्मजैवाहं त्यक्तामेनकयावने ।
वेदैतद्भगवान्कण्वो वीरकिंकरवाणिते ॥ २५ ॥

तब शकुन्तला बोली कि मैं महर्षि विश्वामित्रसे पैदा हुई हूं मेरी माता मेनका अप्सराने मुझे वन में छोड़ दिया था इस बातको भगवान् कण्व ऋषि जानते हैं उन्हीं ने मेरा पालन पोषण किया है हे वीर ! आप कहिये मैं आपका क्या आतिथ्य करूं ॥२५॥

श्रुत्वाहृष्टोयथाधर्म–मुपयेमेशकुन्तलाम् ।
गान्धर्वविधिनाराजा देशकालविधानवित् ॥२६॥
अमोघवीर्योराजर्षि–र्महिष्यांवीर्यमादधे ।
श्वोभूतेस्वपुरंयातः कालेसाऽसूतचात्मजम् ॥२७॥

ऐसा सुनकर राजा प्रसन्न हुआ और देश काल का वि-
धान जानते हुए राजाने शकुन्तला की प्रसन्नता देखकर उस
के साथ गान्धर्व विवाह कर लिया राजर्षि दुष्यन्त के अमो-
घ वीर्य होने से शकुन्तला गर्भवती होगयी अगले दिन राजा
अपने नगर को गया दशवें महिने शकुन्तला के पुत्र हुआ
॥ २६ । २७ ॥

भरतोनामतेजस्वी सचाऽभूत्पृथिवीपतिः ।
वितथस्तस्यपुत्रोऽभू-द्योदेवैःपालितोमुदा ॥२८॥
वितथस्यसुतोमन्यु-र्बृहत्क्षत्रस्तदात्मजः ।
बृहत्क्षत्रस्यपुत्रोऽभू-द्धस्तीयद्धस्तिनापुरम् ॥२९॥

उसका नाम भरत हुआ दुष्यन्त के अनन्तर वही तेजस्वी राजा हुआ जिस के नाम से भारतवर्ष विख्यात है भरतका पुत्र वितथ हुआ जिसका सहर्ष देवताओं ने पालन किया वितथ का पुत्र मन्यु मन्युका बृहत्क्षत्र और बृहत्क्षत्र का पुत्र राजा हस्ती हुआ जिसके नाम से हस्तिनापुर नगर का नाम विख्यात है ॥ २८ । २९ ॥

अजमीढोद्विमीढश्च पुरुमीढश्चहस्तिनः ।
नलिन्यामजमीढस्य नीलःशान्तिस्तुतत्सुतः॥३०॥
शान्तेःसुशान्तिस्तत्पुत्रः पुरुजोऽर्कस्ततोऽभवत् ।
राजनीतिगुणैर्योहि मार्त्तण्डइवसम्बभौ ॥३१॥
भर्म्याश्वस्तत्सुतस्तस्य पञ्चासन्मुद्गलादयः ।
यवीनरोबृहदिषुः कांपिल्यःसञ्जयस्सुताः ॥ ३२ ॥

हस्ती के अजमीढ द्विमीढ पुरुमीढ तीन पुत्र हुए नलि-
नी नामक राणी में अजमीढ का पुत्र नील और उसका शा-
न्ति नामक पुत्र हुआ शान्ति का सुशान्ति उसका पुरुज पुरुज
का पुत्र अर्क हुआ जो राजनीति आदि गुणों में सूर्यके समान
तेजस्वी था अर्कका पुत्र भर्म्याश्व हुआ उस भर्म्याश्व के मुद्गल

यवीनर बृहदिषु काम्पिल्य और संजय ये पांच पुत्र हुए काम्पिल्य ने काम्पिल्य नगर बसाया जो फर्रुखाबाद के जिले में कम्पिला नामसे प्रसिद्ध है। इसी काम्पिल्य वंशमें राजा द्रुपद हुआ जिस की पुत्री का नाम पांचाल वंशी राजा की पुत्री होने से पांचाली हुआ राजा द्रुपदके किलेका चिन्ह फर्रुखाबाद के जिले में सुना जाता है ॥ ३० । ३१ । ३२ ॥

भर्म्याश्वःप्राहपुत्रामे पञ्चानांरक्षणायहि ।
विषयाणामलमिमे इतिपञ्चालसंज्ञिताः ॥ ३३ ॥

राजा भर्म्याश्वने कहा कि मेरे पांच पुत्र पांच प्रदेशों की रक्षा करने को अलं नाम समर्थ होंगे इस से मुद्गलादि पांच क्षत्रियों की पञ्चाल संज्ञा हुई और उनके निवास स्थान देश का नाम भी पञ्चाल उसी समयसे हुआ ॥ ३३ ॥

ततःप्रभृतिभूभाग-स्सःपञ्चालइतीरितः ।
यज्ञोपस्करसंयुक्तः सर्वसौख्यविधायकः ॥ ३४ ॥
विस्तरस्तस्यकथितः कोशलादेश्दक्षिणे ।
भूगोलवर्णनेविज्ञै- र्ज्योतिर्विद्भिर्विनिश्चितः ॥३५॥

तब से लेकर पृथिवी का वह भाग पंचाल देश कहाया जो यज्ञोंके साधनों से युक्त और सर्व विध सुख संपत्ति का विधायक था और है। कोशल नाम अयोध्या अवधके राज्य से दक्षिणमें इस पंचाल देशका विस्तारज्योतिर्विद् विद्वानोंने निश्चित किया है ॥ ३४ । ३५ ॥

इति श्रीमहामहोपाध्याय श्रीजगदीशदेवात्मजमुरारिदेवकृतायां कान्यकुब्जप्रकाशिकायां देशाख्यावर्णने पञ्चालदेशोत्पत्तिवर्णनात्मिका चतुर्थी प्रभा समाप्ता ॥ ४ ॥

यह पं० मुरारि देवकृत कान्यकुब्जप्रकाशिका में देश नाम वर्णन के साथ पंचाल देश की संज्ञा वर्णन रूप चौथी प्रभा समाप्त हुई ॥

तद्वान्तरभेदस्य जान्हव्युत्तरवर्तिनः ।
कान्यकुब्जेतिसंज्ञासोत्त- त्सीमाकथितोमया ॥१॥
स्वायम्भुवस्यचमनो--र्वाक्यमत्रनियामकम् ।
द्वितीयाध्यायइतितद्व्याख्याञ्चक्रेगुणाकरः ॥२॥

गंगा जी से उत्तर में बसे इसी पंचाल देश के अवान्तर देश की कान्यकुब्ज देश संज्ञा हुई उसकी सीमाओं की अवधि हम पहिले कह चुके ॥१॥ और इस में स्वायंभुव मनुका वचन ही नियामक है महा गुणवान् मनु जी ने मानवधर्म शास्त्र के द्वितीयाध्याय में व्याख्यान किया है ॥ २ ॥

तदत्रागतांब्रह्मन्सव्याख्यानं त्वयामुदा ।
यद्विचारेणबालानां भ्रान्तिलोपोभविष्यति ॥३॥

हे चन्द्रनाथ ! तुम उसे प्रसन्न चित्त से सुनो जिस विचार से अज्ञानियों का भ्रम दूर हो जायगा ॥ ३ ॥

कुरुक्षेत्रंचमत्स्यांश्च पञ्चालाःशूरसेनकाः ।
एषब्रह्मर्षिदेशोवै ब्रह्मावर्त्तादनन्तरः ॥ ४ ॥

कुरुक्षेत्र मत्स्य पंचाल और शूरसेनक ये चारों ब्रह्मर्षि ब्राह्मणोंके निवास स्थान देश हैं जो ब्रह्मावर्त्तके अन्तर्गत हैं ॥४॥

पञ्चालाश्चकान्यकुब्ज देशोव्याख्यातवानिति ।
आदिगौड़ेषुविख्यात–स्सुबोधिन्यांगुणाकरः ॥५॥

ब्रह्मावर्त्त के अन्तर्गत पञ्जाब कदापि नहीं आता संस्कृत में पञ्जाबका नाम पंचनद तो अवश्य है पंजाब ब्राह्मण प्रधान देश नहीं किन्तु खत्री प्रधान है इससे वहां प्रायः खत्री गुरु होते हैं; सुबोधिनी ग्रन्थ में ऐसा व्याख्यान किया है कि गुणों की खान पञ्चाल ही आदि गौड़ों में कान्यकुब्ज देश करके विख्यात है ॥ ५ ॥

अथैवमन्यवाक्यैश्च महर्षीणांविशेषतः।
स्वज्ञप्त्यैकान्यकुब्जाख्यो सबीजाऽद्यप्रकाश्यते ६

अब हम महर्षियों के अन्य वाक्यों से विशेष कर तुम [चन्द्रनाथ] को जताने के लिये कान्यकुब्ज नाम का आज मूल सहित प्रकाश करते हैं ॥ ६ ॥

ग्रन्थेजातिविभागाख्ये देशप्रस्तावर्वर्णने।
यदुक्तंतन्मतस्यैव संक्षेपोऽत्रविबुद्ध्यताम् ॥७॥

जाति विभाग नामक ग्रन्थ में देश का प्रस्ताव वर्णन करते समय जो कहा है उसी के मत का संक्षेप से यह वर्णन जानो ॥ ७ ॥

कान्यकुब्जेतिसंज्ञातु सोमवंशीयभूभुजः।
कुशनाभस्यकन्याभि-र्जातापञ्चालसंज्ञिनः ॥८॥

पंचाल संज्ञिक, सोमवंशी राजा कुशनाभकी कान्यकुब्ज संज्ञा कुब्ज कन्याओं के कारण पहिले हुई उस दशा में अर्थ यह होगा कि-"कान्यःकुब्जो यस्य स कान्यकुब्जः" जिस क्षत्रिय राजा की कन्याओं का समूह [कान्य] कुब्ज हुआ वह कान्यकुब्ज कहाया ॥ ८ ॥

तदभ्रमविबोधाय राज्ञःपूर्वपरम्परा।
स्वल्पामेकथ्यतेब्रह्मं-श्चन्द्रनाथनिशामय ॥ ९ ॥

हे चन्द्रनाथ ब्रह्मन् ! उस बात को निर्भ्रम जानने के लिये राजा कुशनाभ की पूर्वसे थोड़ी वंशपरम्परा मैं कहता हूं सो तुम सुनो ॥ ९ ॥

आसीच्चन्द्रान्वयेराजा बुधःपरमधार्मिकः।
तस्यपत्न्यामिलायान्तु संवभूवपुरूरवाः ॥१०॥
ऐलस्यचोर्वशीभार्या विजयंसुषुवेसुतम्।
विजयस्यसुतोभीम-स्तस्यपुत्रस्तुकाञ्चनः ॥११॥

होत्रकस्तनयस्तस्य जन्हुस्तस्यापिचात्मजः ।
जन्होस्तुपूरुस्तत्पुत्रो बलाकोनामपार्थिवः ॥१२॥
बलाकस्यसुतश्चासी-दजकोनामवीर्यवान् ।
ततःकुशःकुशस्यापि कुशनाभश्चवंशकृत् ॥ १३ ॥

चन्द्रवंश में परमधर्मात्मा राजा बुध हुआ, उस राजा बुध की इलानामक पत्नी में राजा पुरूरवा उत्पन्न हुआ, पुरूरवा की उर्वशी नामक दिव्याङ्गना पत्नी ने विजय को उत्पन्न किया, विजय का पुत्र राजा भीम और भीम का पुत्र काञ्चन हुआ, उसका होत्रक, होत्रक का जन्हु, उसका पुत्र पूरु पूरु का पुत्र राजा बलाक हुआ, बलाक का पराक्रमी पुत्र अजक हुआ, उस का कुश और कुश का पुत्र वंश वर्धक कुशनाभ हुआ ॥ १० । ११ । १२ । १३ ॥

कुशनाभश्चधर्मात्मा पञ्चालाधिपउद्बभौ ।
श्रोगुरोराज्ञयायश्च पुरंचक्रेमहोदयम् ॥ १४ ॥

पञ्चाल देश का शासक राजा कुशनाभ उन्नतिशाली धर्मात्मा हुआ जिसने अपने श्री कुलगुरु की आज्ञा से महोदय नामक एक विशाल नगर बसाया ॥ १४ ॥

तस्यजाताघृताच्यांहि सौन्दर्यःशतकन्यकाः ।
यद्वायुनाचताःकन्याः=स्तत्रकुब्जीकृताःपुरा ॥१५॥

रानी घृताचीमें उस राजाकी सुन्दर रूपवती सौ कन्या हुईं । जिस कारण वायु देवता ने शरीर में प्रविष्ट होकर उन कन्याओं को कुब्ज कर दिया इस कारण राजा के बसाये उस नगर का नाम कान्यकुब्ज हुआ [कन्यानां समूहः कान्यः स कुब्जो यस्मिन्नगरे तन्नगरं कान्यकुब्जम्] जिस नगरमें कुब्जकन्या रहीं उसका नाम कान्यकुब्ज हुआ ॥ १५ ॥

कान्यकुब्जेतिविख्यातं-ततःप्रभृतितत्पुरम् ।
कान्यःकुब्जोयस्यसोपि कान्यकुब्जस्समृतोनृपः १६

तब से लेकर वह नगर कान्यकुब्ज कहाने लगा और कन्याओं का समूह कुब्ज जिसका कुब्ज होगया ऐसे अर्थसे राजा कुशनाभ का भी नाम कान्यकुब्ज होगया ॥ १६ ॥

देशोपिराज्ञस्संबन्धा–त्कान्यकुब्जाख्यथायुत: ।
तत:प्रभृतिसञ्जातो यज्ञोपस्करसंयुत: ॥१७॥

और जैसे कुरुपंचालादि क्षत्रिय राजाओंके नामसे देशके भी वैसे ही नाम पड़े हैं वैसे ही कान्यकुब्ज राजाके नाम से उसका पाल्यदेश भी कान्य कुब्ज नाम से विख्यात हुआ, तभीसे वह देश यज्ञके साधनोंसे भरा पूरा सुशोभित हुआ ॥१७॥

यज्ञसंसिद्धिलोभेन तत्रोषुर्ब्राह्मणाश्चये ।
कान्यकुब्जाख्ययातेपि युतादेशप्रसंगत: ॥१८॥

यज्ञ करने के लोभसे जो ब्राह्मण विशेषकर उस कान्य कुब्ज देश में बसे उनका नाम भी देशके प्रसंगसे कान्यकुब्ज हुआ ॥ १८ ॥

मुख्याख्यामवराख्योति स्तद्दीपयतिस्फुटम् ।
भूतलेकिंवदन्तीति राजतेदृश्यतेपिच ॥ १९ ॥

पिछला गौणनाम पहिले मुख्य नामको दबालेता है यह किंवदन्ती भूमण्डल पर प्रसिद्ध है तथा ऐसा हो दीख पड़ता है ॥ १९ ॥

एवंवैदुर्बलोजाता याआख्यावैदिकास्स्मृता: ।
देशाख्याप्रबलाजाता: सर्वत्रैवेतिबुध्यताम् ॥२०॥

इस प्रकार जो पहिले वैदिक उपाधियों से नाम पड़े थे वे दुर्बल होगये और देशके निवास से पीछे हुए नाम कान्य-कुब्जादि प्रबल पड़ गये यह बात सर्वत्र ऐसी ही जानो ॥२०॥

अतोवैकान्यकुब्जाये विप्राब्राह्मतपोधना: ।
तपोदेशनिवासेन यज्ञै:सर्वोत्तमास्स्मृता: ॥ २१ ॥

इससे जो ब्रह्मत्वके तपसे युक्त कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं वे तपः प्रधानदेश के निवास से और उत्तम २ वेदोक्त यज्ञ करने से ब्राह्मणों में उत्तम माने गये हैं ॥ २१ ॥

एवंयेऽन्येपिविप्रेन्द्रास्तपयुक्तास्सुधर्मिणः ।
वसन्तोधर्म्यदेशेषु तेपिसर्वोत्तमास्स्मृताः ॥२२ ॥

इसी प्रकार अन्य भी जो सुधर्मी तपोयुक्त धर्म प्रधान देशोंके निवासी ब्राह्मण हैं वे भी सर्व साधारण से श्रेष्ठ माने गये हैं ॥ २२ ॥

अतोवैबुद्धिहीनानां परस्परविरोधिनाम् ।
रूक्षावाचोनसंग्राह्या वृद्धैस्सिद्धान्तकोविदैः ॥२३॥

इससे परस्पर विरोधी बुद्धिहीन मूर्ख ब्राह्मणोंकी रूखीवाणी सिद्धान्त जाननेवाले विद्यावृद्ध महाशयोंको मन्तव्य नहीं है ॥२३॥

अथाऽन्यदपिवक्ष्यामि चोक्तवृत्तान्तपुष्टये ।
वाल्मीकिमतमाश्रित्य विशेषंत्वंनिबोधतम् ॥२४॥

हे चन्द्रनाथ ! महर्षि बाल्मीकिजी के मतसे उक्त वृत्तान्तकी पुष्टिके लिये अब हम और भी कुछ कहते हैं उस विशेष विचारको तुम सुनो ॥२४॥

ब्रह्मयोनिर्महानासीत्कुशोनाममहातपाः ।
अक्लिष्टव्रततत्वज्ञस्सज्जनप्रतिपोषकः ॥ २५॥

ब्रह्मत्व है कारण जिसका ऐसा महातपस्वी, अतिक्लिष्ट व्रतों के तत्त्व को जानने वाला, सज्जन महात्माओंका रक्षक पोषक राजा कुश हुआ ॥ २५ ॥

समहात्माकुलीनायां युक्तायांसुमहाबलान् ।
वैदर्भ्याञ्जनयामास चतुरस्सदृशान्सुतान् ॥२६॥
कुशांबंकुशनाभंच असूर्तरजसंवसुम् ।
दीप्तियुक्तान्महोत्साहान् क्षत्रधर्मचिकीर्षया ॥२७॥

उस महात्मा राजाने विवाहिता कुलीना वैदर्भी रानी में क्षत्रियधर्म की इच्छा से बड़े उत्साही अपने तुल्य बलिष्ठ धर्मात्मा कुशाम्ब, कुशनाभ, असूर्तरजस और वसु इन चार प्रतापी उत्साही पुत्रोंको उत्पन्न किया ॥ २६ ॥ २७ ॥

तानुवाचकुशःपुत्रान्धर्मिष्ठान्सत्यवादिनः ।
क्रियतांपालनंपुत्रा धर्मंप्राप्स्यथपुष्कलम् ॥२८॥
कुशस्यवचनंश्रुत्वा चत्वारोलोकसम्मताः ।
निवेशंचक्रिरेसर्वे पुराणंनृवरास्तदा ॥ २९ ॥
कुशांबस्तुमहातेजाः कौशाम्बीमकरोत्पुरीम् ।
कुशनाभस्तुधर्मात्मा पुरञ्चक्रेमहोदयम् ॥ ३० ॥
असूर्तरजसोनाम धर्मारण्यम्महामतिः ।
चक्रेपुरवरंराजा वसुर्नामगिरिव्रजम् ॥ ३१ ॥

उन धर्मनिष्ठ सत्यवादी चारों पुत्रोंसे राजा कुशने कहा, कि हे पुत्रो ! ठीक २ न्यायसे प्रजाका पालन करो तुम सब पुष्कल धर्मको प्राप्त होगे ॥ २८ ॥ राजा कुशका वचन सुनकर चारो प्रजाहितैषी श्रेष्ठ राजपुत्रोंने अपनी २ राजधानीके चार नगर बसाये, महा प्रतापी कुशाम्बकी बसायी पुरी का नाम कौशाम्बी हुआ, राजर्षि कुशनाभने महोदय नामक नगर बसाया, महाबुद्धिमान् असूर्तरजस राजाने धर्मारण्य नामक नगर बसाया और राजा वसु ने गिरिव्रज नामक उत्तम नगर में अपनी राजधानी स्थापित की ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

कुशनाभस्तुराजर्षिः कन्याशतमनुत्तमम् ।
जनयामासधर्मात्मा घृताच्यांरघुनन्दन ॥३२॥

विश्वामित्र जी भगवान् रामचन्द्र जी से कहते हैं कि— हे रघुनन्दन ! धर्मात्मा राजर्षि कुशनाभने घृताची नामक महारानी में अत्युत्तम सौ कन्या उत्पन्न कीं ॥ ३२ ॥

तास्तुयौवनशालिन्यो रूपवत्यस्स्वलंकृताः ।
उद्यानभूमिमासाद्य प्रावृषीवशतह्रदाः ॥३३॥
गायन्त्योनृत्यमानाश्च वादयन्त्यश्चराघव ।
आमोदंपरमंजग्मुर्वराभरणभूषिताः ॥ ३४ ॥

वे अति सुन्दरी, रूप यौवन से युक्त उत्तम अलङ्कारोंसे शोभित सौ कन्या वर्षा ऋतुमें विद्युत् के समान राज्यके साधारण उपवन में चमकतीं, अत्युत्तम आभरणोंसे भूषित गातीं बजातीं नाचतीं हुईं परम प्रसन्न हो रहीं थीं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

तास्सर्वागुणसम्पन्ना रूपयौवनसंयुताः ।
दृष्ट्वासर्वात्मकोवायु–रिदंवचनमब्रवीत् ॥ ३५ ॥
अहंवःकामयेसर्वा भार्याममभविष्यथ ।
मानुषस्त्यज्यताम्भावो दीर्घमायुरवाप्स्यथ ॥३६॥
चलंहियौवनंनित्यं मानुषेषु विशेषतः ।
अक्षयंयौवनंप्राप्ता अमर्यश्चभविष्यथ ॥ ३७ ॥

उन रूपयौवन युक्त सर्व शुभ गुणों से संपन्न कन्याओं को देखकर सर्वान्तर्यामी वायुका अधिष्ठातृ देव विग्रहवान् होकर यह बोला कि हे कन्याओ ! हम वायुदेव तुम सब को चाहते हैं कि तुम सब हमारी पत्नी होजाओ । तुम्हारा मनुष्यपन छूट जायगा, तुम सब अमर दिव्याङ्गना होजाओगी मनुष्य योनि में विशेष कर यौवन सुख बहुत ही कम है मनुष्य को युवावस्था का आनन्द बीस पच्चीस वर्षसे अधिक प्रायः प्राप्त नहींहोता परन्तु देवयोनि में करोड़ों अर्बो खर्बों वर्षों तक अविनाशी यौवन तुम सबको प्राप्त होजायगा तुम सब अमर होजाओगी ॥ ३५ । ३६ । ३७ ॥

तस्यतद्वचनंश्रुत्वा वायोरक्लिष्टकर्मणः ।
अपहास्यततोवाक्यं कन्याशतमथाऽब्रवीत् ॥३८॥

पिताहिप्रभुरस्माकं दैवतंपरमञ्चसः ।
यस्यनोदास्यतिपिता सनोभर्ताभविष्यति ॥३९॥

सर्वोपरिविलिष्ट कर्म वाले उन वायु देव के उस वचनको सुनकर सौ कन्या वायुदेव का उपहास करके बोलीं कि हमारा पिता ही परम देवता और हमारा प्रभु है वह पिता जिसके लिये हमें देगा वही हमारा पति होगा ॥३८ । ३९ ॥

तासांतुवचनंश्रुत्वा हरिःपरमकोपनः ।
प्रविश्यसर्वगात्राणि बभञ्जभगवान्प्रभुः ॥४०॥

उन कन्याओं का वचन सुनकर परम कोप करने वाले वायुदेवने उन कन्याओं के शरीरों में प्रविष्ट हो कर सबको अङ्ग भङ्ग [कुब्ज] कर दिया सब सौ कन्या, कुबड़ी हो गयीं ॥४०॥

ताःकन्यावायुनाभग्ना विविशुर्नृपतेर्गृहम् ।
सखतादयितामग्नाः कन्याःपरमशोभनाः ।
दृष्ट्वादीनास्तदाराजा सम्भ्रान्तइदमब्रवीत् ॥४१॥
किमिदंकथ्यतांपुत्र्यः कोधर्ममवमन्यते ।
कुब्जाःकेनकृतास्सर्वा-श्चेष्टन्त्योनाभिभाषथ ॥२॥

उन परम सुन्दरी अपनी प्यारी दीन कन्याओं को अङ्ग भङ्ग कुब्ज हुई देखकर संभ्रान्त हुआ राजा बोला कि हे पुत्रियो ! यह क्या हुआ कहो तुम्हारे धर्म का अपमान कौन करना चाहता है तुमको किसने कुब्ज कर दिया ? तुम चेष्टा करतीं हुई भी अपना वृत्तान्त क्यों नहीं कहतीं ॥ ४१ । ४२ ॥

तस्यतद्वचनंश्रुत्वा कुशनाभस्यधीमतः ।
शिरोभिश्चरणौस्पृष्ट्वा कन्याशतमभाषत ॥४३॥

बुद्धिमान् राजा कुशनाभ के उस वचन को सुनकर अपने शिरों से राजाके चरणोंका स्पर्श करके सौ कन्या बोलीं॥४३॥

वायुस्सर्वात्मकोराजन्प्रधर्षयितुमिच्छति ।
अशुभंमार्गमास्थाय नधर्मंप्रत्यवेक्षते ॥ ४४ ॥

कि हे राजन् ! सर्वान्तर्यामी वायु देव धर्म विरुद्ध अशुभ मार्ग पर आरूढ़ होकर हम सब को धमका लेना चाहता है और वह देवता होकर भी धर्म को नहीं देखता ! [पाठक कामदेव ऐसा बली है जो देवों को भी डिगा देता है तब मनुष्य की क्या शक्ति है] ॥ ४४ ॥

तासान्तुवचनंश्रुत्वा राजापरमधार्मिकः ।
प्रत्युवाचमहातेजाः कन्याशतमनुत्तमम् ॥४५॥
क्षान्तंक्षमावतांपुत्र्यः कर्त्तव्यंसुमहत्कृतम् ।
ऐकमत्यमुपागम्य कुलञ्चावेक्षितंमम ॥४६॥
अलङ्कारोहिनारीणां क्षमातुपुरुषस्यवा ।
दुष्करंतच्चवैक्षान्तं त्रिदशेषुविशेषतः ॥ ४७ ॥

महा तेजस्वी परमधार्मिक राजा ने उन कन्याओं का वचन सुनकर परम रूपवती सौ कन्याओं से कहा कि हे पुत्रियो ! क्षमाशील पुरुषों का महान् कर्तव्य क्षमा है सो तुमने एक मत होकर क्षमा की, यह बहुत अच्छा किया तुमने हमारी कुलमर्यादा की बड़ी रक्षा की, यद्यपि पुरुषों का भी दुष्कर भूषण क्षमा है तथापि विशेष कर स्त्रियों का परमभूषण क्षमा है सो तुम ने क्षमा की देवों के साथ विशेष कर क्षमा ही उचित थी ॥ ४५ । ४६ । ४७ ॥

विसृज्यकन्याःकाकुत्स्थ राजात्रिदशविक्रमः ।
मन्त्रज्ञोमन्त्रयामास प्रदानंसहमन्त्रिभिः ॥४८॥
सुबुद्धिंकृतवान्राजा कुशनाभस्सुधार्मिकः ।
ब्रह्मदत्तायकाकुत्स्थ दातुंकन्याशतंतदा ॥४९॥

विश्वामित्र जी कहते हैं कि हे काकुत्स्थ रामचन्द्र जी ! देव तुल्य पराक्रमी राजा कुशनाभ ने कन्याओं को वहीं छोड़ के कन्याओं के दान करने की सलाह सम्मति मन्त्रियों के

साथ की, सब की सम्मति से उत्तम धर्मनिष्ठ राजा कुशनाभ की सुबुद्धि महर्षि ब्रह्मदत्त को भी कन्यादान कर देनेकी इस कारण हुई कि कुब्ज कन्याओं के साथ कोई राजा विवाह नहीं करेगा क्योंकि राजाओंमें ब्राह्मणोंके तुल्य तपोबल नहीं होता था जो कुब्ज भाव को मेट सकते ॥ ४८ । ४९ ॥

तमाहूयमहातेजा ब्रह्मदत्तंमहीपतिः ।
ददौकन्याशतंराजा सुप्रीतेनान्तरात्मना ॥ ५० ॥

महातेजस्वी राजा ने काम्पिल्य नगर से महर्षि ब्रह्मदत्त को राजदूतों द्वारा आदर के साथ बुलवाके सुप्रसन्न अन्तःकरण से सौ कन्याओं का दान करदिया ॥५०॥

स्पृष्टमात्रेतदापाणौ त्रिकुब्जंविगतज्वरम् ।
युक्तंपरमयालक्ष्म्या बभौकन्याशतंतदा ॥ ५१ ॥

ब्रह्मर्षि ब्रह्मदत्त के पाणिग्रहण करते ही स्पर्श मात्रसे उनसौ कन्याओं का कुबड़ापन नष्ट होगया और वे पूर्ववत् परम शोभावती हो गयीं ॥ ५१ ॥

इत्यादिविस्तरःप्रोक्तो विश्वामित्रेणधीमता ।
रामायकान्यकुब्जेति देशाख्यामूलकारणम् ॥५२॥

इत्यादि कथा वाल्मीकीय रामायणके बालकाण्डस्थ ३४।३५ सर्गों में विस्तार से लिखी और ब्रह्मर्षि विश्वामित्र ने भगवान् रामचन्द्र जी को कान्यकुब्ज देश के नाम का मूल कारण सुनाया है ॥ ५२ ॥

एतत्तेकथितंब्रह्मन्मयातु सप्रमाणकम् ।
पंचालेकान्यकुब्जाख्या प्राप्तिकारणमुत्तमम् ॥५३॥

हे ब्रह्मनाथ ! हमने प्रमाण सहित यह उत्तम विचार तुम से कहा जो कि पञ्चाल देश में कान्यकुब्ज देश नाम होनेका उत्तम हेतु है ॥ ५३ ॥

आर्य्यावर्त्तैकभागोयं देशःपरमपावनः ।
अन्तर्वेदोत्तरेरम्यस्सर्वसौख्यविधायकः ॥५४॥

आर्यावर्त्त महान् देशका एक भाग परमपवित्र अन्तर्वेद में रमणीय सब सुखों का स्थान कान्यकुब्ज देश है ॥५५॥

एतन्निवासिविप्राणां प्रतिष्ठासीत्पुरावरा ।
बृहदारण्यइत्यस्य प्रमाणंपश्यसन्मते ॥५५॥

हे सत् बुद्धि वाले चन्द्रनाथ ! इस देश के निवासी ब्राह्मणों की अति प्राचीन काल में बड़ी प्रतिष्ठा थी इस का प्रमाण बृहदारण्यक उपनिषद् में देखो ॥५५॥

जनकस्यमहीपाल चक्रचूड़ामणेर्निमे ।
यज्ञगोदानवृत्तान्ते दृष्ट्वाहर्षमवाप्नुहि ॥५६॥

राजाओं के शिरोमणि राजा जनक के यज्ञ में गोदान प्रसंग पर ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा देखकर तुम प्रसन्न आनन्दित हो जाओ ॥ ५६ ॥

काणश्चकुब्जकश्चैव भ्रातराविति याकथा ।
मूर्खास्यनिःसृतासातु हेयानिर्मूलभाषणात् ॥५७॥

और जो पहिले लिखा था कि काण तथा कुब्ज दो भाइयों का वंश कान्यकुब्ज कहायो यह कथा मूर्खों के मुखसे निकली शास्त्र प्रमाण से विरुद्ध निर्मूल भाषण होने से मिथ्या है ॥ ५७ ॥

अतस्तेकान्यकुब्जानां ब्राह्मणानांविशेषतः ।
प्रतिष्ठामहतीज्ञेया विज्ञैर्नित्यंमहात्मनाम् ॥५८॥

इति श्रीकवीन्द्रमुरारिदेवकृतायां कान्यकुब्जप्रकाशिकायां कान्यकुब्जदेशोत्पत्तिवर्णनात्मिका पञ्चमीप्रभा समाप्ता ॥५॥

इस से तुम्हारे साथी महात्मा कान्यकुब्ज पदवाच्य ब्राह्मणों की महती प्रतिष्ठा विद्वानों को जाननी माननी चाहिये यह हमारी [मुरारि देव की] सम्मति है ॥५८॥

यह कवीन्द्र मुरारिदेवकृत कान्यकुब्ज प्रकाशिका में कान्यकुब्ज देशोत्पत्ति वर्णन रूप पांचवीं प्रभा समाप्त हुई ॥५॥

अथतेकान्यकुब्जानां प्रतिष्ठां संवदाम्यहम् ।
तद्वंशमागधानांहि वंशपुस्तकलेखतः ॥१॥

हे चन्द्रनाथ ! वंश मागध नामया वंश पुस्तक के लेख से कान्यकुब्ज ब्राह्मणों की और भी प्रतिष्ठा हम कहते हैं ॥१॥

एकदाकालयोगेन दुर्भिक्षादिप्रपीडिताः ।
देशंत्यक्त्वा कान्यकुब्जं प्रजादेशांतरंययुः ॥२॥

एक समय दैवयोग से दुर्भिक्षादि से पीड़ित होकर तथा कान्यकुब्ज देश को छोड़ के अधिकांश प्रजा देशान्तर को भाग गयी ॥ २ ॥

एवंकालान्तरेजाते विश्वामित्रोमहामुनिः ।
निशम्यरामागमनं वनान्निर्वृत्यधर्मतः ॥३॥
राज्याभिषेकं सुखदं चापिश्रुत्वाप्रहर्षितः ।
श्रीरामदर्शनाकांक्षी राजधानींसमाययौ ॥४॥

इस प्रकार काल बीतने पर महामुनि विश्वामित्र भगवान् राम जी का वनवास से धर्मानुकूल निवृत्त होके पुनरागमन सुनकर और सुखदायक राज्याभिषेक हुआ सुनके प्रसन्न हुए श्री राम जी के दर्शन की इच्छा से राजधानी अवध में गये ॥ ३ । ४ ॥

दृष्ट्वातमागतंहर्षाद्भगवाञ्जानकीपतिः ।
सिंहासनात्समुत्थाय प्रणनाममुहुर्मुहुः ॥५॥

जानकी पति भगवान् राम जीने उन विश्वामित्र जी को आया देखकर सिंहासन से उठ के बार २ प्रणाम किया ॥५॥

तमासनेसमावेश्य सम्यगर्घ्यविधानतः ।
पप्रच्छकुशलंविप्रं स्वागतंचाब्रवीन्मुदा ॥६॥

उन को शुभासन पर बैठाकर विधिपूर्वक पूजन करके कुशल क्षेम पूछा और हर्ष से स्वागत कहा ॥ ६ ॥

कृतातिथ्योमहातेजा विश्वामित्रोऽब्रवीद्वचः ।
कुशलंसर्वदाराम त्वयिराज्यंप्रशासति ॥७॥

आतिथ्य सत्कार हो जाने पर महातेजस्वी विश्वामित्रजी बोले कि सुभाग्य से आपके राज्य करते हुए सर्वदा कुशलही है॥७॥

दिष्ट्या दिष्ट्यात्वयाराम रावणस्सानुजोहतः ।
दिष्ट्याऽनंतेनवीरेण रावणिर्विनिपातितः ॥८॥

सुभाग्य से ही आपने सपरिवार रावणको मारा सुभाग्य से लक्ष्मण वीर ने रावण के पुत्र को मारा ॥ ८ ॥

दिष्ट्याविभीषणोभक्तस्त्वयाराज्येप्रतिष्ठितः ।
दिष्ट्यायज्ञभुजोदेवा जाताधर्मःप्रवर्त्तते ॥९॥

दैवेच्छा से आपने विभीषण को लंका का राजा बनाया तथा दैवगति से ही देवता लोग यज्ञ भागोंके भोगी हुए जिस से धर्म की प्रवृत्ति हो रही है ॥ ९ ॥

महाभाग्योदयश्चाऽद्य रघुवंशस्यराघव ।
पितृपैतामहंराज्यं धर्माद्यत्त्वंसमाश्रितः ॥१०॥

हे राघव ! रघुवंश का बड़ा भाग्योदय हुआ है जो आप बाप दादों के राज्यासन पर धर्म से आरूढ़ हुए हो ॥१०॥

वाञ्छापूर्त्तिःप्रजानांच ब्राह्मणानांविशेषतः ।
त्वयाराघवनाथेन क्रियतेपरयामुदा ॥११॥

अवध की प्रजाकी वांछा पूरी हुई, हे नाथ! राघव! राम! आप बड़े हर्ष से विशेष कर ब्राह्मणों की अभिलाषायें पूरी करते हो ॥ ११ ॥

किंचिन्मेवाञ्छितंराम हृदयेपरिवर्त्तते ।
श्रुत्वाचतत्त्वयातूर्णंकार्यंधर्मार्थसंयुतम् ॥१२॥

हे राम ! कुछ वाञ्छा हमारे हृदयमें भी वर्त्तमान है उस धर्मार्थ युक्त हमारी इच्छा को सुनकर आप शीघ्र पूरी करेंगे ऐसी आशा है ॥ १२ ॥

आर्यावर्तान्तरालेये देशाःपञ्चालसंज्ञकाः ।
मत्पूर्वजानांतेराम समासन्राज्यभूतयः ॥ १३ ॥

आर्यावर्त्त के अन्तर्गत जो देश पंचाल संज्ञक हैं हे राम । वे हमारे पूर्वजों की राज्य विभूतियां हैं ॥ १३ ॥

तत्रैकोन्यकुब्जाख्ये देशःपरमपावनः ।
राजर्षेः कुशनाभस्य कन्यायोगादभूत्स्फुटः ॥१४॥

उसी पंचाल में परमपवित्र कान्यकुब्ज नामक देश है जिसका नाम राजर्षि कुशनाभ की कुब्ज कन्याओं के कारण प्रकट हुआ है ॥ १४ ॥

अथेदानींकालयोगात्सोच्छिन्नोदेशउत्तमः ।
त्वयियातेवनंराम स्वर्गतेचक्रवर्तिनि ॥ १५ ॥

अब समय पाकर आपके वनवास में जाने पर और चक्रवर्ती दशरथ के स्वर्गवास हो जाने पर वह उत्तम कान्यकुब्ज देश उच्छिन्न हो गया है ॥ १५ ॥

तस्मिन्ममहत्सत्वंवर्त्ततेराघवोत्तम ।
स्वपूर्वराज्यभूमित्वादतस्त्वामर्थयाम्यहम् ॥१६॥

हे राघव ! उस देशमें हमारा बड़ा स्वत्व है क्योंकि पूर्वकाल में हमीं लोगों की वह राज्य भूमि थी इस कारण हम आप से निवेदन करते हैं ॥ १६ ॥

मत्पूर्वजैर्मयाचापि पूजितादानमानतः ।
वसन्तोविषयेऽस्माकं विप्राब्राह्मतपोधनाः ॥१७॥

हमारे उस कान्यकुब्ज देश में बसते हुए तपस्वी ब्राह्मणों का हम ने और हमारे पूर्वजों ने दान मान से सम्यक् पूजन किया था ॥ १७ ॥

कालोपद्रवतस्तेषु केचिद्देशान्तरङ्गताः ।
दुःखिताअपिकेचित्तु तत्रैवनिवसन्तिहि ॥१८॥

मन्यमानंस्तपोदेशं मुक्तिदायकमुत्तमम् ।
तेषांमानःप्रकर्त्तव्यस्त्वयाब्राह्मतपोयुजाम् ॥१९॥

काल पड़ने से अनेक ब्राह्मण देशान्तर को चले गये और कोई २ दुःखित हुए उस कान्यकुब्ज देशको तप का स्थान मुक्ति का हेतु मानते हुए वहीं निवास करते हैं हे राम! उन तपस्वी कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंका सत्कार आपको करना चाहिये॥१८।१९॥

प्रतिष्ठाचापिदातव्या राजन्सर्वोत्तमा त्वया ।
विप्रेभ्यस्तेभ्यआदृत्य जहिक्लेशंमहात्मनाम् ।२०।

हे राजन्! उन ब्राह्मणों को आदर पूर्वक सर्वोत्तम प्रतिष्ठा देनी चाहिये और उन महात्माओं के क्लेश को आप दूर कीजिये ॥ २० ॥

त्वंगतिस्त्वंमतिस्तेषांत्वंभूतिस्त्वंरतिःपरा ।
त्वत्प्राप्तयेपरंयैस्तु देहःकामैरनर्चितः ॥२१॥

उन ब्राह्मणों की तुम गति मति रक्षक और परम सुख देने वाले तुम्हीं हो, उन ब्राह्मणों ने तुम भगवान् की प्राप्ति के लिये ही काम भोगों से चित्त को हटाया है ॥ २१ ॥

शुभाऽशुभानांसर्वत्र कर्मणांफलदोभवान् ।
किन्तर्हिकरुणासिन्धो भक्तांस्तान्समुपेक्षसे ॥२२॥

जब कि शुभ अशुभ कर्मों का सर्वत्र फल देने वाले आप ही हैं तब हे करुणा निधान! उन भक्त ब्राह्मणों की उपेक्षा क्यों करते हो ? ॥

येचदेशान्तरंप्राप्ता दुःखितास्तनभूतयः ।
तानप्यानीयतत्स्थानं संस्थापयितुमर्हसि ॥२३॥
अन्यानपिमहाबाहो स्वधर्मनिरताञ्जनान् ।
बाहुजानूरुजान्पादान्संस्थापयितुमर्हसि ॥२४॥

जो सननाम तपोरूप विभूतियों वाले ब्राह्मण दुःखित होकर

देशान्तरोंमें चले गये उन को भी बुलाकर फिर उनके पूर्वजों के स्थानों पर स्थापित कीजिये ॥ २३ ॥ तथा हे महाबाहो राम ! अन्य क्षत्रियादि स्वधर्म प्रेमी मनुष्यों को उन २ के पूर्वस्थानों पर प्रतिष्ठित कीजिये ॥ २४ ॥

कुरुयज्ञंकृपोसिन्धो नीरमुत्तरमाश्रितः ।
जान्हव्यास्तत्रसर्वांस्त्वमाहूयार्चयमाचिरम् ॥२५॥

हे कृपासिन्धु ! गंगाजीके उत्तर तटपर आप यज्ञ करो वहां सब भगे हुए ब्राह्मणोंको बुलाकर यज्ञमें शीघ्र पूजन करो॥२५॥

ब्रह्मण्यदेवधर्मात्मन् गच्छप्राचेतसाश्रमम् ।
वाल्मीकेर्मतमाश्रित्य यज्ञात्मन्यज्ञमाचर ॥२६॥
श्रुत्वाब्रह्मण्यदेवस्तद्भाषितंधर्मसंमतम् ।
ओमित्युक्त्वानमश्चक्रे मन्त्रयामासमन्त्रिभिः॥२७॥

हे ब्रह्मण्यदेव ! हे धर्मात्मन् ! प्राचेतसाश्रम को जाइये हे यज्ञस्वरूप विष्णो ! वाल्मीकि महर्षि की अनुमतिसे यज्ञ कीजिये ॥२६॥ ब्रह्मण्य देव भगवान् रामने महर्षि विश्वामित्र का धर्म युक्त भाषण सुनकर ओं इस प्रकार स्वीकार करके मन्त्री लोगों से सम्मतिली ॥ २७ ॥

ततोबहिश्चरणप्राणैर्भ्रातृभिस्साकमव्ययः ।
जगामगुरुणासार्द्धं वाल्मीकेराश्रमंहरिः ॥२८॥

तदनन्तर बाहर विचरने वाले प्राणरूप भ्राताओंके साथ और गुरु वसिष्ठजीके सहित अविनाशी हरि राम जी वाल्मीकि जी के आश्रमको गये ॥ २८ ॥

विश्वामित्रस्यवचसा तत्रस्थान्ब्राह्मणोत्तमान् ।
तावदाकारयामास बहुमानपुरस्सरम् ॥२९॥

विश्वामित्रजीके कथनानुसार रामजी ने कान्यकुब्ज देशके निवासी उत्तम ब्राह्मणोंको सम्मान पूर्वक बुलानेकी सूचना करायी२९॥

तत्राजग्मुर्महात्मानो यज्ञविस्तरकोविदाः ।
येस्वदेशंतपोन्मूलं विपत्तावपिनोजहुः ॥ ३० ॥

यज्ञ करने कराने में मर्यादा महानुभाव वे ब्राह्मण आये जिन्होंने तपः प्रधान होने से अपने देश को विपत्ति में भी नहीं त्यागा था ॥ ३० ॥

भारद्वाजाश्चकातीयाः काश्यपाऔपमन्यवः ।
शाण्डिल्याश्सांकृताएतेकान्यकुब्जौकसस्सदा ॥३१॥
एतान्संपूज्यविप्रेन्द्रान् भगवान्भक्तवत्सलः ।
यज्ञंसंवर्तयामास तानाचार्यान्विधायच ॥३२॥

भारद्वाज, कात्यायन, काश्यप, औपमन्यव, शाण्डिल्य, सांकृत, इन गोत्रोंवाले ब्राह्मण सदा ही कान्यकुब्ज देश के अटल निवासी रहे ॥ ३१ ॥ भक्त वत्सल भगवान् राम जी ने इन उक्त उत्तम ब्राह्मणों का पूजन कर उनको आचार्य बना के यज्ञका आरम्भ किया ॥ ३२ ॥

देशान्तरंगतायेच सतानप्याजुहावह ।
निमन्त्रणंचाकलय्य तेऽपितूर्णंसमाययुः ॥३३॥
गर्गश्चगौतमोवत्सो भरद्वाजोधनञ्जयः ।
पराशरोवशिष्ठश्च कविस्तःकौशिकोमुनिः ॥३४॥
काश्यपश्चेतिवंशीया–स्तेप्रोक्ताब्राह्मणोत्तमाः ।
एतैश्चशुशुभेयज्ञोविधिवत्परिकल्पितः ॥ ३५ ॥

और जो कान्यकुब्ज दुर्भिक्ष विपत्तिके कारण देशान्तरों को भाग गये थे उनको भी आदर पूर्वक बुलवाया, निमन्त्रण सुनकर वे भी देशान्तरों से शीघ्र आये ॥ ३३ ॥ गर्ग, गौतम, वत्स, भरद्वाज, धनञ्जय, पराशर, वसिष्ठ, कविस्त, कौशिक और काश्यप इन गर्गादि ऋषियोंके गोत्रों वाले ब्राह्मण उत्तम कुलीन माने जाते हैं इन सब गोत्रोंवाले ब्राह्मणोंसे विधि पूर्वक रचा हुआ यज्ञ परम सुशोभित हुआ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

देवाश्चपितरश्चैव मुनयश्चतपोधनाः ।
पूजितादानमानैश्च पानान्नैश्चयथोचितम् ॥३६॥

देव, पितर, ऋषि मुनि तपस्वी इन सब का यथोचित दान मानों से पूजन किया गया ॥ ३६ ॥

येचयज्ञेसमाहूता ब्राह्मणाःषट्कुलोद्भवाः ।
तेषांप्रतिष्ठांमहतीं चकार रघुनन्दनः ॥ ३७ ॥
ग्रामानश्वान्गजान्यानान्यदाद्ग्रामोधनानिच ॥
नित्यंनिवासं स्वदेशे कान्यकुब्जेवरंपरम् ॥३८॥

और भारद्वाजादि छः कुल के ब्राह्मण जो यज्ञमें बुलाये थे उनकी बड़ी प्रतिष्ठा भगवान् रामजी ने की, घोड़े, हाथी रथादि सवारियां, गांव और धन उन सब को दिये और नित्य कान्यकुब्ज देशमें निवास करने की आज्ञा सबको दी ॥३७।३८॥

येचान्यकुलजाविप्रा–स्समाहूतास्तपोधनाः ।
देशान्तरात्पुनस्तेषां विषयेवासमादिशत् ॥३९॥
ददौधनानिदानानि ग्रामानश्वान्पशून्रथान् ।
विविधान्भौमभोगांश्च तेभ्यश्श्रीरघुनन्दनः ।४०।

और जिन तपोधन कुलीन ब्राह्मणों को देशान्तरसे बुलाया था उन को भी कान्यकुब्ज देश में निवास करने की आज्ञा दी । उनको भी धन, ग्राम, घोड़े, रथ, पशु, और भूमिकी अनेक जागीरें भगवान् रघुनाथ जी ने दीं ॥ ३९ । ४० ॥

तेषामेवानुसेवार्थं क्षत्रियान्वणिजोऽनुगान् ।
निवासयामासहरि–स्तान्सन्तोष्यधनादिभिः ।४१।

इस प्रकार कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंको भगवान् रामने धनादिसे संतुष्ट करके उन ब्राह्मणों की सेवा तथा रक्षा करने के लिये क्षत्रिय वैश्यादि को भी उस देश में बसाया ॥ ४१ ॥

ततश्चकौशिकोदृष्ट्वा स्वदेशंपूर्ववत्स्थितम् ।
प्रशशंस मुदायुक्तो रामं राजीवलोचनम् ॥४२॥

तदनन्तर कौशिक मुनि विश्वामित्र ने अपने देशको

पूर्ववत् सम्पन्न देखकर बड़े हर्षसे कमलनयन भगवान् रामजी की प्रशंसा की ॥ ४२ ॥

समाप्ययज्ञंश्रीरामस्स्नात्वाऽवभृथमेकराट् ।
आज्ञप्तः कौशिकाद्यैश्च स्वांपुरीमगमत्प्रियैः ॥४३॥

इस प्रकार भूमण्डलके एक ही राजारामचन्द्र जी ने यज्ञ को समाप्त कर अवभृथ स्नान किया तब कौशिक मुनि विश्वामित्रादि से आज्ञा लेकर अपने प्रिय भ्रातादि के सहित अयोध्यापुरी को गये ॥ ४३ ॥

इत्येवंकान्यकुब्जाख्यो देशश्चपुनरुद्धृतः ।
प्रतिष्ठिताराघवेण कान्यकुब्जाश्चभूसुराः ॥४४॥

इस प्रकार कान्यकुब्ज नामक देश का पुनः जीर्णोद्धार हुआ अर्थात् उन्नति को प्राप्त हुआ और कान्यकुब्ज ब्राह्मणों को भगवान् रामजी ने प्रतिष्ठा दी ॥ ४४ ॥

इतितेचार्थिताःप्रश्नामयाशास्त्राऽनुसारतः ।
एकैवब्राह्मणज्ञाति-र्देशाख्याभिर्विकल्पिता ॥४५॥

कवीन्द्र मुरारि देव कहते हैं कि हे चन्द्रनाथ ! इस प्रकार आपके किये प्रश्नोंका उत्तर हमने शास्त्र प्रमाणों के अनुसार दिया है। वास्तवमें सब नामों वाले ब्राह्मण एक ही जाति हैं। देशके नामों से इनके अनेक नाम होगये हैं ॥४५॥

नकोऽप्यवरजोज्येष्ठो जात्यात्वंहीत्यवेहिभोः ।
कर्मैवमुख्यमत्रास्ति ततोवेदाश्रयोभवेत् ॥४६॥

हे चन्द्रनाथ ! इन नामोंके होने मात्रसे वा जाति मात्रसे कोई ब्राह्मण छोटा वा बड़ा अर्थात् श्रेष्ठ वा निकृष्ट नहीं है यह ध्यान रक्खो किन्तु मानवादि धर्मशास्त्रों में कहे ब्राह्मणों के धर्म कर्मोंमें जो जितना चढ़ा बढ़ा है वह उतना ही श्रेष्ठ है इससे ब्राह्मणको वेदाभ्यासी होना चाहिये ॥ ४६ ॥

नित्यंनैमित्तिकंकर्म विप्रोनिष्काममाचरेत् ।
ज्ञानभक्त्याश्रयं कुर्वन्नुत्तमत्त्वं नचान्यथा ॥४७॥

ब्राह्मण को चाहिये कि अपने नित्य नैमित्तिक कर्मको निष्काम होकर करै ज्ञान और भक्तिके आश्रयसे स्वधर्म सेवन करता हुआ ब्राह्मण श्रेष्ठ होता है अन्यथा नहीं ॥ ४७ ॥

इतिमद्वचसांवेगादन्तर्यामीप्रसीदतु ।
भ्रमन्धुनोतुबालानां तस्मैधर्मात्मनेनमः ॥४८॥

ओ३म्-तत्सत् ॥ इति श्रीमहामहोपाध्याय श्रीमुरलीधरोपनामक श्रीजगदीशदेवतनूजकवीन्द्रश्रीमुरारिदेवकृतायां कान्यकुब्जप्रकाशिकायां कान्यकुब्जभूदेवमानप्रतिष्ठावर्णनात्मिका षष्ठीप्रभा समाप्ता ॥६॥
समाप्तोऽयंग्रन्थः । श्रीकृष्णार्पणमस्तु

शुभम् ॥

आश्विनशुक्ला १५ भौमे संवत् १९६३ मिते वैक्रमेदुर्गादत्तेन लिखितमिदम्पुस्तकम् * ॥

मुरारिदेव ग्रन्थकार अन्तमें भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि हमारे इन वचनों से भगवान् अन्तर्यामी प्रसन्न हों और वे भगवान् मूर्ख ब्राह्मणोंके [नाम मात्र से कल्पित मिथ्याभिमानकी प्रतिष्ठा के] भ्रमको नष्ट करैं उस धर्म स्वरूप भगवान्के चरणोंमें मेरा नमस्कार है ॥ ४८ ॥

यह मुरारिदेव कृत कान्यकुब्ज प्रकाशिका में कान्यकुब्जब्राह्मणोंकी मान प्रतिष्ठा वर्णनरूप छठीप्रभा समाप्तहुई॥
ओं तत्सत् परमात्मने नमः ॥ समाप्तोऽयंग्रन्थः ॥

श्रीवृन्दावनकुंजविहरतश्यामाश्यामनव ।
हरहुनिवारकपुंज करहु मनोरथ पूर्णसब ॥१॥

हमारी प्रार्थना—

पाठक ब्राह्मण वर्ग ! इस पुस्तकसे दो बातें प्रकट होती हैं एक तो यह कि कान्यकुब्ज ब्राह्मणों को जो लोग काने तथा कुबड़े दो मूर्ख भाइयोंके सन्तान कहकर निन्दा करते हैं

यह बात मिथ्या निर्मूल है। द्वितीय कान्यकुब्जादि नाम होने मात्र से जो अपने को स्वयं बड़ा मान बैठे हैं यह भी युक्ति प्रमाणसे विरुद्ध मिथ्या है परन्तु कान्यकुब्जादि की जो वेदाध्ययनयज्ञानुष्ठानादि सदाचारोंके द्वारा प्रतिष्ठा हुई वा होगी वह सब शास्त्रानुकूल ठीक है। अब ऐसा समय आ-गया है कि सब नामों वाले ब्राह्मणोंको नाम मात्रसे मानी प्रतिष्ठाका अहंकार छोड़के अपने २ कुलों वा जातियोंमें जो २ कुरीतियां काल पाकर चल गयीं हैं उनको जातीय सभादिके द्वारा हटाके मन्वादि महर्षियोंके कहे प्रतिष्ठा के मार्ग का प्रचार अपने २ कुलोंमें आरम्भ करदेना चाहिये।

विप्राणांज्ञानतोज्यैष्ठ्यं क्षत्रियाणांतुवीर्यतः।
वैश्यानांधान्यधनतः शूद्राणामेवजन्मतः॥
ब्राह्मणेषुचविद्वांसो विद्वत्सुकृतबुद्धयः।
कृतबुद्धिषुकर्त्तारः कर्त्तृषुब्रह्मवेदिनः॥

भा०—ब्राह्मणोंमें जो जितना अधिक ज्ञानी है वह वैसा ही अधिक मान्य तथा श्रेष्ठ है, क्षत्रियोंमें अधिक पराक्रमी, वैश्योंमें अधिक धनी और शूद्रोंमें बड़ी आयु वाला मान्यहै। अन्य वर्णोंसे सभी ब्राह्मण श्रेष्ठ, साधारण ब्राह्मणोंसे विद्वान् श्रेष्ठ, विद्वानों में अनुभवी विद्वान् श्रेष्ठ, अनुभवियों में धर्म कर्म निष्ठ विद्वान् श्रेष्ठ, और उनमें भी ब्रह्मज्ञानी विद्वान् ब्रा-ह्मण सबसे अधिक श्रेष्ठ और मान्य है। जब तक ब्राह्मणों में श्रेष्ठ मानने की यही प्राचीन रीति विद्यमान रही तब तक इस जाति की बड़ी उन्नति थी अब भी यदि इसी वि-चार का अवलम्बन किया जायगा तो महा प्रतापी तेजस्वी ब्रह्मर्षियों के सन्तान ब्राह्मण फिर भी कभी उन्नतिके शिखरपर आरूढ़ हो सकते हैं॥

निवेदक—ब्राह्मणानुचर

भीमसेन शर्म्मा सम्पादक ब्रा० स०

पुस्तक मिलने का पता—

मैनेजर ब्रह्मप्रेस

इटावा ।